

डॉ. प्रतापनारायण टण्डन

सन्मार्ग प्रकाशन
१६, यू० बी० अशफ़ाक उल्लाह मार्ग
जवाहर नगर, दिल्ली-११०००७

धब्बे

(मौलिक उपन्यास)

डॉ० प्रतापनारायण टंडन

प्रथम संस्करण
१९७५

मूल्य : दस रुपये

प्रकाशक
सन्मार्ग प्रकाशन
१६ यू० बी० अशफ़ाक उल्लाह मार्ग
जवाहर नगर, दिल्ली-७

मुद्रक
विकाश आर्ट प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-३२

DHABBE : DR. PRATAPNARAYAN TANDON Rs. 10.00

१

हर रोज एक नया सवेरा होता है और अंधी रीति के सामने एक चुनौती के समान खड़ा हो जाता है। उसकी कोमल कल्पनाएँ क्रूर विधाता के कठोर विधान से टकराकर चूर-चूर हो जाती हैं। आगे-पीछे की तमाम घटनाएँ उसके दिल और दिमाग पर हावी रहती हैं और वह उनके जाल में फँसी मछली-सी तड़पती रहती है। कभी-कभी उसकी अदम्य इच्छाएँ इस सीमा तक मचल उठती हैं कि वह अपनी विवशता की सीमाओं को भूल जाना चाहती है। उसका मन अकुला-अकुलाकर रह जाता है। अब तक उसकी आँखों के कई ऑपरेशन हो चुके होते हैं, लेकिन अब भी अंधी-की-अंधी ही बनी रहती है। बस थोड़ी-थोड़ी टिमटिमाहट-सी ही उसे महसूस होती है। वह थोड़ा-थोड़ा देख सकती है, लेकिन बस थोड़ा-थोड़ा ही। उसके लिए सारा संसार अँधियारे में ही डूबा रहता है। उसके लिए सारे मनुष्य चलते-फिरते अँधियारे, आकृतिविहीन आकार मात्र हैं। कभी-कभी तो वह अपनी उमंग में खोयी रहती, लेकिन कभी-कभी गहरी उदासी में भरकर उसका मन दुःखी हो उठता है। जब घर के सारे बच्चे स्कूल चले जाते हैं, तब वह सुस्त होकर अकेली बैठी रहती। और तो और अब उसका छोटा भइया भी स्लेट-किताब झोले में रखकर स्कूल जाने लगता है।

'अ से अनार।' भइया किताब में पढ़ता।

'अनार ?' रीति पूछती।

'हाँ, अ से अनार।' वह गर्व के साथ उत्तर देता।

'अनार ? क्या खाने वाला अनार ?' वह फिर पूछती ।

'हाँ, खाने वाला अनार । यह देखो ।'

और भइया अपनी किताब उसके सामने बढ़ा देता । वह घूरकर देखती । शायद कुछ छोटे-बड़े धब्बे किताब पर पड़े हुए हैं, मटियाले-से ।

'कहाँ है अनार ?' वह फिर पूछती ।

'यह देखो, यह बना तो है । अ से अनार, आ से आम ।'

'आम ?' वह चौंक उठती ।

'हाँ, आ से आम ।' अब भइये के गर्व की सीमा नहीं रहती ।

'आम ? मीठा वाला आम ?' वह फिर पूछती है ।

'हाँ, यह देखो ।' भइया फिर किताब दिखाता है ।

'लाओ देखें,' वह हाथ बढ़ाकर किताब ले लेती है । उसे इधर से उधर से उलटा-सीधा करके देखती है । आम का स्वाद उसे याद आने लगता है । लेकिन किताब में तो उसे वही मटमैले धब्बे-से दिखाई पड़ते हैं । वह अपनी आँख के एकदम नजदीक लाकर आम ढूँढ़ती है ।

'लाओ हमारी किताब, खराब हो जाएगी', भइया झटके से उसके हाथ से किताब छीन लेता है ।

वह रोने लगती है । तभी कोई पास आकर एकदम से उसे गोद में उठाकर उसका गाल चूम लेता है ।

'पापा !' उसका मन पुलक से भर उठता है । वह खूब कसकर अपनी पतली फूल जैसी बाँहों से उनकी गर्दन जकड़ लेती है । अब कोई डर नहीं है । पापा की गोद में आकर उसे इस अंधी दुनिया से कोई डर नहीं लगता ।

'पापा, हमें भइये की किताब दिलवा दो ।' वह एकाएक मचल उठती है । वह जानती है कि पापा अभी उससे किताब छीनकर दे देंगे ।

'हम नहीं देंगे, अपनी किताब । इसे दिखाई तो पड़ता नहीं, खराब कर देती है ।' कहता हुआ भइया एकदम से किताब लेकर भाग जाता है ।

'हम तुम्हें दूसरी किताब ला देंगे ।' पापा उससे कहते हैं ।

'नहीं हम यही किताब लेंगे, अनार वाली, आम वाली ।' वह मचलती है ।

'स्कूल भी जाती हो कि किताब ही लोगी ?' दरवाजे की ओट में

से भइया चुनौती देता है।

'स्कूल ?' वह चौंक उठती है। हाँ, वह भी स्कूल जाएगी। मन में पक्का निश्चय करके वह पापा से कहती है : 'हम भी अब स्कूल जाया करेंगे।'

'अच्छा, जाना।' पापा उसे आश्वस्त करते हैं।

'नहीं, हम अभी जाएँगे।' वह तुरन्त ही नये कपड़े पहनकर स्कूल पहुँच जाना चाहती है।

'अभी तो स्कूल बंद है।' पापा समझाते हैं।

'अच्छा कल जाएँगे ?' वह पूछती है।

'हाँ,' उसे उत्तर मिलता है।

वह कल्पना करने लगती है उस समय की, जब वह भी अपने भइये की तरह स्कूल जाएगी। उसके कंधे पर बढ़िया कुंडी वाला बस्ता लटका होगा, उसमें छोटी-छोटी किताबें होंगी, उन किताबों में बहुत-सी रंग-बिरंगी तस्वीरें बनी होंगी। उसमें लाल-नीली-हरी-पीली पेंसिलें होंगी और एक छोटी-सी स्लेट होगी। उसमें वह एक छोटा-सा डिब्बा भी रखेगी, उसमें बिस्कुट, केक, गुझिया, रसगुल्ला…

'हम अभी जाएँगे।' रसगुल्ले का स्वाद जैसे उसकी जबान में मिठास घोल देता है। कल तो अभी बहुत दूर है।

'नहीं बेटा, आज तो स्कूल बन्द है। कल ले चलेंगे तुम्हें।' पापा कहते हैं।

'अच्छा तो हमें खाने का डिब्बा अभी ला दो, जैसा भइये का है।' वह कहती है।

'अभी हम बाजार जाएँगे, वहाँ से एक नया डिब्बा ला देंगे, तुम्हारे लिए।' पापा फिर समझाते हैं।

'और बस्ता ?' वह पूछती है।

'बस्ता भी।' उत्तर मिलता है।

'और किताबें ?' वह फिर पूछती है।

'किताबें भी।' फिर उत्तर मिलता है।

'और स्लेट ?' उसका ध्यान जाता है।

'स्लेट भी।' पापा हँसकर कहते हैं।

'और पेंसिल ?' वह फिर पूछती है ।

'वह भी ।' पापा फिर आश्वासन देते हैं।

उसने भइया का डिब्बा, बस्ता, किताबें, स्लेट और पेंसिल देखी थीं। उसका भी सभी सामान ठीक वैसा ही आएगा, जैसा भइये का है ।

लेकिन रसगुल्ला···मीठा-मीठा···रसदार···

'अच्छा, अभी हम भइये का डिब्बा ले लें ?' वह फिर पूछती है।

'नहीं, भइये का डिब्बा मत लो, हम अभी बाजार से तुम्हारे लिए एक नया डिब्बा ला देंगे ।' पापा कहते हैं ।

वह मन-ही-मन डिब्बे को पाने को सुख की कल्पना करने लगती है···

उसे लगता है कि सारी दुनिया में जैसे यह शोर हो गया है कि उसका नाम स्कूल में लिखने वाला है । वह भी स्कूल पढ़ने जाने वाली है। वह खुद भी बच्चों के सामने इस रहस्य का उद्घाटन करना चाहती है और पापा की गोद से उतरकर सामने छत पर पहुँच जाती है ।

'हम भी स्कूल जाएँगे ।' वह जैसे शून्य को सम्बोधित करके कहती है । उसे पता नहीं सामने कौन-कौन बच्चे हैं । फिर भी वह काँपती हुई आवाज में घोषणा कर देती है : 'हमारा नाम भी स्कूल में लिखेगा ।'

'यह अंधी है, यह कैसे स्कूल जाएगी ? यह कैसे किताबें पढ़ेगी ? यह कैसे स्लेट पर लिखेगी ?' कुछ बच्चे आशंका प्रकट करते हैं ।

लेकिन इन लोगों के कहने से क्या होता है । वह तो कल से स्कूल जाएगी ही । पापा ने कहा है ।

'···स्कूल में तुम्हारा क्या नाम लिखवाया जाएगा ?' सहसा उसका छोटा भइया पास आकर चुनौती भरी आवाज में पूछता है ।

वह चौंक उठती है। स्कूल में कौन-सा नाम लिखवाया जाएगा । स्कूल में सबका नाम लिखा जाता है। स्कूल में उसका नाम भी लिखा जाएगा ।

'हमारा नाम तो अजय कुमार लिखा है, रजिस्टर में ।' भइया उसे गर्व से सूचना देता है ।

'अजय कुमार ?' उसके मुँह से निकलता है। वह सोचने लगती है कि उसके भइये को सब लोग घर में अलग-अलग नामों से पुकारते हैं

ललुआ, मनुआ, छुटुआ···मगर स्कूल के रजिस्टर में उसका नाम लिखा है—अजय कुमार।

उसे भी अपना नाम स्कूल में लिखवाना होगा। लेकिन कौन-सा नाम? वह दुविधा में पड़ जाती है। घर में लोग उसे जाने किन-किन नामों से पुकारते हैं: गुडिया, पुनिया, अश्शू, पोच्चे, लाडो, बिब्बो··· लेकिन स्कूल के लिए···

तो स्कूल के लिए भी एक नाम रखना होगा। कौन-सा नाम होगा, कैसा नाम होगा···

वह सोच में डूब जाती है।···यह भी पापा से ही पूछना होगा।

'···पापा हमारा नाम लिखेगा स्कूल में?' वह उनके पास जाकर पूछती हैं।

'हाँ, लिखेगा?' वह पक्की आवाज में जवाब देते हैं।

'कौन-सा नाम लिखवाओगे हमारा स्कूल के रजिस्टर में?' वह पूछती है।

'कौन-सा नाम?' पापा चौंकते हैं।

'हाँ, कौन-सा नाम?' वह फिर पूछती है।

'रीति? और क्या?' वह जवाब देते हैं।

'रीति?' वह पूछती है।

'हाँ, तुम्हारा नाम लिखवाएँगे कुमारी रीति।'

'कुमारी रीति।' हाँ यही नाम रजिस्टर में लिखवाया जाएगा। अभी जाकर सबको खबर देनी होगी।

'भइये, ओ भइये, कहाँ गए तुम? सुनो, यहाँ आओ, हमारा नाम जानते हो स्कूल में क्या लिखा जाएगा? मालूम है, तुम्हें? अच्छा, बताओ क्या लिखा जाएगा। क्या बिब्बो?···नहीं। पोचे भी नहीं। मुनिया भी नहीं। लाडो भी नहीं। बेबी भी नहीं। गुड़िया भी नहीं। नहीं, नहीं, स्कूल में ऐसे नाम थोड़े ही लिखे जाते हैं। बताओ··बोलो ···नहीं मालूम···अच्छा, हम बताएँ। हमारा नाम स्कूल के रजिस्टर में लिखा जाएगा—'कुमारी रीति' समझे? हाँ, कुमारी रीति··तुम्हारा नाम अजय कुमार लिखा है स्कूल के रजिस्टर में तो हमारा भी नाम लिखा जाएगा कुमारी रीति।' वह फूली नहीं समाती है।

···पापा इस समय एक अखबार लिए हुए बैठे हैं। मम्मी रसोई-घर में हैं। भइया स्कूल चला गया है। रीति हमेशा की तरह उदास बैठी शून्य में निहार रही है।

कभी-कभी वह ऐसे ही उदास बैठी रह जाती है। उसकी धुँधली दृष्टि उसे उसकी भौतिक सीमाओं का अपमानपूर्ण बोध करा देती है। उसकी विवशता उसे पीड़ा पहुँचाने लगती है। ऐसे क्षण उसके लिए वेदना के क्षण सिद्ध होते हैं। तब वह शून्य में ताकती रहती है। कुछ भी उसे स्पष्ट नहीं दिखाई देता है। एक रहस्यमयता ही उसे कचौटती है। वह तिरस्कृत अनुभव करती है और एक गहरी उदासी उस पर बराबर छायी रहती है।

'तुम्हारे स्कूल की खबर छपी है अखबार में आज।' पापा सहसा उसे एक दिन सूचना देते हैं।

रीति अपना गिरा हुआ मुँह ऊपर उठाती है। उसके स्कूल की खबर। हाँ, उसके स्कूल की खबर। वह पापा का मुँह निहारने लगती है।

'आज तुम घर में खेलो। शाम को तुम्हारे स्कूल का सारा सामान आ जाएगा।···अभी हम तुम्हारे स्कूल एक चिट्ठी भी लिख रहे हैं। अखबार में उसके बारे में छपा है।' पापा अखबार हिलाते हुए उसे समझाते हैं।

रीति अब भी कुछ नहीं बोलती। उत्सुकता से पापा की ओर निहारती रहती है। उसकी उदासी धीरे-धीरे जाने लगती है। वह देखती है, पापा अखबार लेकर मेज के सामने बैठ जाते हैं।

'जब इस चिट्ठी का जवाब आ जाएगा, तुम्हारे स्कूल से, तब तुम स्कूल जाओगी।' पापा उसे समझाते हैं।

वह सोच में पड़ जाती है। बहुत कुछ सोचने लगती है। न जाने क्या-क्या। उसकी स्थिर पुतलियाँ ताकती रहती हैं। पापा अब कागज निकाल रहे हैं। अब कलम से उस पर कुछ लिख रहे हैं। अब लिफाफा निकाल रहे हैं। कागज को मोड़कर उसमें चिट्ठी रख रहे हैं। फिर लिफाफे पर पता लिख रहे हैं।

'धीरज !' पापा नौकर को आवाज देकर बुलाते हैं, 'यह चिट्ठी

अभी जाकर छोड़ आओ।'

उसकी दृष्टि का सूनापन एक अनिश्चित परिधि में चक्कर लगाने लगता है। वह कौतूहलजनक कल्पनाओं में खो जाती है।···

···शाम को पापा उसके लिए एक बस्ता और एक डिब्बा ले आते हैं। सवेरे जब पापा दफ्तर जा रहे थे, तब उसने उन्हें जाते-जाते याद दिला दी थी।

'आज जरूर ले आएँगे।' उन्होंने उसे आश्वासन दिया था।

और रीति देखती है कि शाम को जब वह लौटते हैं तो सचमुच उनके हाथ में एक बस्ता होता है और उसमें एक छोटा-सा डिब्बा भी।

वह लपककर उनके हाथ से झोला ले लेती है और उसे उलट-पलटकर देखने लगती है। हरा-हरा रंगीन बढ़िया झोला। उसमें एक लम्बी-सी पट्टी लगी है। वह इस पट्टी को अपने गले में डालकर लटका लेती है और सारे घर में शोर मचा देती है।

'हमें अपना बस्ता नहीं दिखाओगी?' भइया बड़ी अनुनय से उससे कहता है।

'नहीं।' वह स्पष्ट रूप से मनाही कर देती है, 'तुमने भी तो अपना बस्ता हमें नहीं दिखाया था।'

भइया यह सुनकर सुस्त हो जाता है और मुँह लटकाकर बैठ जाता है। फिर कहता है, 'अच्छा जाओ, न दिखाओ। अब हम तुमसे नहीं बोलेंगे।'

'न बोलो।' वह रुखाई से कह देती है।

'हम तुम्हारे लिए स्कूल से चॉकलेट नहीं लाएँगे।' भइया दूसरा वार करता है।

'न लाना।' वह फिर उपेक्षा से कह देती है।

···लेकिन चॉकलेट···उसके मन में कुछ दुविधा-सी आ जाती है। भइया अगर नहीं बोलता है तो न बोले। यहाँ तक तो गनीमत है। मगर चॉकलेट···उसे चॉकलेट का स्वाद याद आता है।

उसका भइया बड़ा अच्छा है। वह सोचने लगती है। वह अपने स्कूल से लौटकर रोज उसे एक चॉकलेट देता है।

'अच्छा लो।' वह कुछ सोचकर झोला भइये के हाथ में दे

देती है।

भइया उसका बस्ता अपने हाथों में ले लेता है। उसे अच्छी तरह से उलट-पलटकर देखता है, परखता है, लेकिन जल्दी ही रीति उसे वापस ले लेती है। उसका बस्ता खराब हो जाएगा।

'खाना ले जाने वाला डिब्बा भी इसमें है ?' भइया शंकालु भाव से पूछता है।

'हाँ,' रीति जवाब देती है। वह भी अपने डिब्बे में बिस्कुट, मिठाई …ले जाएगी।

'पापा हमारे लिए लाए हैं।' वह फिर अपना अधिकार स्पष्ट करती है, और दूसरे बच्चों को यह सूचना देने चली जाती है।

२

अभी डाकिया आया है और पापा कुछ चिट्ठियाँ उलट-पलट कर देख रहे हैं।

'रीति ! तुम्हारे स्कूल से चिट्ठी आ गई है। आज हम तुम्हारे स्कूल चलेंगे।' पापा उसे बताते हैं।

वह हर्ष के आवेग से भर उठती है। वह भी स्कूल जायगी, जैसे उसका भइया स्कूल जाता है, जैसे और सब बच्चे स्कूल जाते हैं।

पापा लिफाफे में से निकाली हुई चिट्ठी पढ़ते हैं। वह कौतूहल से उनकी ओर ताकती रहती है। पापा उस कागज में कुछ लिखने लगते हैं।

'हम इसमें तुम्हारा नाम लिख रहे हैं।' पापा बताते हैं।

रीति के शरीर में एक सिहरन-सी होने लगती है। उसका नाम लिखा जा रहा है। उसका नाम भी वैसे ही लिखा जायगा, जैसे भइये का नाम लिखा गया था। भइये का नाम लिखा गया था अजय कुमार। और उसका नाम भी लिखा जायगा रीति, कुमारी रीति।

'क्या नाम लिख रहे हो ?' वह आश्वस्त होना चाहती है।

'कुमारी रीति !' पापा बताते हैं।

'कुमारी रीति !' उसके मन में फिर एक प्रकार की पुलकन-सी भर जाती है।

पापा कागज में कुछ और लिखने लगते हैं। वह टोह कर भइये के पास पहुंचती है।

'ए भइये' वह काँपती हुई ग्रावाज में उसे बताती है, 'हमारा नाम भी स्कूल में लिख गया है कुमारी रीति।'

भइया लट्टू नचाते-नचाते एक बार उसकी ग्रोर देखता है ग्रौर फिर ग्रपने खेल में मग्न हो जाता है।

रीति का उत्साह कुछ भंग होता है।···ग्रब किसे सूचना दी जाय।···वह रसोईघर में पहुँच जाती है।

'मम्मी! मम्मी! पापा ने हमारा नाम स्कूल में लिखवा दिया है।'

'ग्रच्छा!' मम्मी कहती हैं।

'हाँ, बताग्रो क्या नाम लिखा है?' वह परीक्षा लेना चाहती है।

'क्यों? रीति!' मम्मी फिर कहती हैं।

'नहीं कुमारी रीति···कुमारी रीति!'

'ग्ररे वाह, इतना ग्रच्छा नाम।' मम्मी कहती हैं।

वह तृप्त हो जाती है ग्रौर किसी तीसरे को यह सूचना देने की व्याकुलता में वहाँ से चल पड़ती है।

···उसे बड़ा ग्रधैर्य-सा लगता है। बार-बार वह ग्रपने ग्राप ही जैसे चौंक उठती है। ग्रपनी छोटी-छोटी उँगलियों ग्रौर हथेलियों से वह बार-बार ग्राँखें मलती है। ग्रब हर रोज एक नया सवेरा उसके सामने एक नयी चुनौती के रूप में उदित होता है। वह उस सवेरे के इंतजार में है जब उसके जीवन का एक नया ग्रध्याय ग्रारम्भ होगा।

···पिछले पन्द्रह दिनों से सूरज नहीं निकला है। लोग बातें करते हैं कि पूरे सौ वर्षों से इतनी सरदी नहीं पड़ी है।···ग्राज ग्रासमान से बादल हट गये हैं। कहीं-कहीं पर स्वच्छ ग्राकाश ग्रौर बिना धूप का चमकीलापन छाया हुग्रा है। छत पर थोड़ी-सी गरमी महसूस होती है।

छुटका छत पर छज्जे से लटका खड़ा है। नीचे गली में शायद चुनिया खड़ी हुई है। छुटका उसी को चिढ़ाता हुग्रा गा रहा है:

'नाना नाना भूख लगी
खा लो बेटा मूँगफली
मूँगफली में दाना नहीं

हम तुम्हारे नाना नहीं ।'

नीचे से चुनिया उसे गालियाँ बकती है । तब छुटका पिछली रात को कहारी टोले में सुना हुआ गाना गाने लगता ।

'राजा मोहे···

होय राजा मोहे

बरेली का सुरमा तो लाय दो

होय···'

फिर थोड़ी देर में अपनी लय बदल कर वह गाता है 'बैलऊ बिकाय मोका लै देओ लटकन ।'

तभी दूर कहीं से रेडियो की आवाज हल्के-से लहराती है, तो छुटका गाने लगता है :

'भइया मोरे

राखी के बंधन को···'

'ऐ छुटके ।' रीति अब उसे टोकती है ।

'क्या है, रीति ?' छुटका ताज्जुब से पूछता है ।

'यह कौन-सा गाना गा रहे हो ? यह गाना हमारा है ।' रीति कहती है ।

'लेकिन यह तो मेरे मन का है ।' छुटका कहता है ।

'नहीं, नहीं यह मत गाओ, यह हमारा है ।' रीति कहती है ।

'अच्छा तो 'मैंने पीना सीख लिया ।' गायें ।' छुटका पूछता है ।

'नहीं, वह भी हमारा है ।' रीति कहती है ।

'अच्छा तो 'तड़पाओगे ? तड़पा लो' वाला ।' छुटका पूछता है ।

'नहीं, वह भी नहीं ।' रीति प्रतिवाद करती है ।

'अच्छा तो 'चुन-चुन करती आयी चिड़िया' तो हमारा है, वह गायें ?' छुटका अब तिनक जाता है ।

'हाँ, वह गाओ ।' रीति कहती है ।

'चुन चुन करती आयी चिड़िया, दाल का दाना लायी चिड़िया । मोर भी आया···' छुटका आवाज बना-बनाकर गाने लगता है ।

लेकिन रीति को अब लगता है कि जो सबसे बढ़िया गाना है, वह तो छुटका हथियाए हुए है । वाह···'चुन-चुन करती आयी चिड़िया,' वह

गुनगुनाने लगती है।

'ऐ छुटके ?' वह बोल उठती है।

'क्या है ? अब क्या बात है ?' छुटका पूछता है।

'सुनो। तुम मेरे सब गाने ले लो, बस हमें 'चुन चुन करती आयी चिड़िया' दे दो।' रीति कहती है।

'अच्छा, ले लो। हम 'मैंने पीना' गायेंगे।' कहते हुए छुटका गाने लगता है, 'मैंने पीना सीख लिया···'

···सन्नाटे भरी दोपहरी में वह ऊपर कमरे में पापा के पास सो रही है। भइया भी खटोले पर सोया है। मम्मी नीचे हैं। तभी कोई पापा को आवाज देता है। उसकी आँख तत्काल खुल जाती है।

'रीति ?' पापा उठते हुए पुकारते हैं।

रीति आँख खोलकर उनकी तरफ देखने लगती है, कुछ बोलती नहीं।

'रीति' वह फिर पुकारते हैं।

'क्या ?' रीति सहमते हुए पूछती है।

'देखो बेटा ! तुम यहीं रहना। हम अभी नीचे होकर आते हैं। तुम्हारा भइया भी यहीं सो रहा है। बाहर मत जाना।···' पापा कहते हैं।

'नहीं, हम भी चलेंगे।' वह मचल जाती है।

'तुम यहीं रहो, हम बस अभी आते हैं।' पापा समझाते हैं।

'नहीं, हमें डर लगेगा।' वह रुआंसी होने लगती है।

'नहीं, यहीं रहो। भइया भी तो है।' कहते हुए पापा नीचे चले आते हैं और दरवाजा बाहर से बंद करते जाते हैं।

रीति शंकित दृष्टि से भइये की तरफ देखती है। छोटे से खटोले पर वह गहरी नींद में सोया हुआ महीन आवाज़ में खुर्र-खुर्र कर रहा है।

रीति को ध्यान आता है, इसी तरह खरगोश बोलता है। लाल-लाल आँखों वाला, सफेद-सफेद खरगोश।

ग्रौर हाँ, इसी सफेद खरगोश को एकबार एक बिल्ली उठा ले गयी थी ग्रौर मारकर खा गयी थी। बिल्ली हाँ, बिल्ली ! उस रात एक बिल्ली रो रही थी। उसकी डरावनी ग्रावाज़ बड़ी देर तक गूंजती रही थी। ग्रौर एकबार खुली खिड़की से बिल्ली कूदकर ग्रंदर ग्रा गयी थी। रीति पलँग पर लेटी थी। उसके पेट ग्रौर मुँह पर पंजे मारती हुई वह एक छलाँग में भाग गयी थी। उसके पंजों से रीति के तमाम खरोंचें लग गयी थीं। वह चीखकर रो पड़ी थी।

उसे लगता है जैसे छत पर कोई बिल्ली बैठी हो ग्रौर दरवाजा या खिड़की खुलते ही उसको पंजों से खसोटने की घात में हो।...

खुर्र खुर्र...यह भइये की ग्रावाज़ है, नहीं, नहीं, यह शायद उस खरगोश की ग्रावाज है, जिसकी गर्दन बिल्ली ने दबोच रखी थी, नहीं शायद यह बिल्ली के घुड़कने की ग्रावाज़ है, जो छत पर रीति की घात में बैठी है।... रीति की छाती धक्-धक् करने लगती है।

'भइये।' वह धीरे से खटोले की तरफ देखते हुए भइये को ग्रावाज देती है। लेकिन वह कुछ नहीं बोलता है ग्रौर उसी तरह खुर्र-खुर्र करता हुग्रा सोता रहता है।...

रीति सोचती है, इस वक्त ग्रगर बिल्ली कमरे में ग्रा जायगी, तो उसी तरह से रीति की गरदन दबोच लेगी, जिस तरह उसने खरगोश की गरदन दबोची थी।...

रीति की ग्राँखों में ग्राँसू ग्रा जाते हैं।

'पापा।' वह भयभीत होकर पुकारना चाहती है, लेकिन शायद वह किसी ग्रादमी से बातें कर रहे हैं, वह सुनेंगे नहीं।

'मम्मी।' वह जोर से पुकारना चाहती है, लेकिन शायद मम्मी नीचे रसोई में हैं, उसकी ग्रावाज उन तक नहीं पहुँचेगी।...

तभी उसका कलेजा धक् से हो जाता है। दरवाजे पर खट् सा होता है। कौन है, बिल्ली ! नहीं, कुछ ग्रौर मालूम पड़ता है।...कौन हो सकता है ? क्या हो सकता है ? तीतर ? हाँ, तीतर। उसने तीतर कभी देखा नहीं था। लेकिन छुटके ने उसे तीतर के बारे में बताया था। एक बार छुटके इतवार के दिन नक्खास के बाजार गया था। वहाँ उसने दो तीतरों की लड़ाई देखी थी। उसका बड़ा रोमाँचक वर्णन उसने रीति

से किया था।···

तो क्या तीतर ने अभी दरवाजे पर चोंच मारी थी। बड़ी जोर से अपनी चोंच मारकर तीतर किसी का गोश्त नोच सकता है, किसी की आँख निकाल सकता है।···और इस वक्त तीतर वहाँ छत पर आया है। कमरे के बाहर दरवाजे पर चोंच मार रहा है, रीति का गोश्त नोचने की घात में है, उसकी आँख···रीति की आँखें आँसुओं से भर आती हैं। भइये···पापा···मम्मी···वह पुकारना चाहती है, लेकिन उसके मुँह से आवाज नहीं निकलती।

तभी भड़ाक् की आवाज़ के साथ दरवाज़ा खुल जाता है। रीति चौंक पड़ती है। मालूम होता है कि पापा आये हैं। उसकी भीगी आँखों में आँसू बहकर उसके गालों पर लुढ़क आये हैं।

'रीति!' पापा उसे पुकारते हैं, फिर उसे रोते देखकर कहते हैं, 'अरे, क्या हुआ? डर लग रहा था?'

रीति कुछ जवाब नहीं देती, सिर्फ ओंठ बिचका कर मौन रुदन करने लगती है। पापा उसे गोद में लेकर पुचकारते हुए खिलाने लगते हैं।

···सब लोग सो गये हैं। रीति भइये से बात कर रही है।

'भइये। आज हमने छोटे वाले खरगोश के बच्चे को गोद में लिया था। खूब सफेद-सफेद था, एकदम थलथल।' रीति बताती है।

'हाँ, हमने देखा था। तुमने उसकी आँखें देखीं थीं—एकदम लाल-लाल थीं?' भइया पूछता है।

'हाँ, लाल चमक रही थीं···जैसे···' रीति कहती है।

'लेकिन बड़े वाले खरगोश को कभी गोद में न लेना···वह बड़ा खराब है।' भइया हिदायत देता है।

'हाँ, उसे हम नहीं लेते हैं। एक बार हमने हाथ बढ़ाकर उसे पकड़ा गोद लेने के लिए तो वह हमें भँभोड़ने लगा। हमने उसे उठाकर फेंक दिया।' रीति बताती है।

'अच्छा, आज हम जो सिपाहियों वाली सीटी लाए हैं, वो तुमने देखी थी?' भइया पूछता है।

'हाँ, लेकिन हमें फुर्र-फुर्र वाली सीटी ज्यादा अच्छी लगती है, फीं-फीं वाली कम ।' रीति कहती है ।

'लेकिन सब बच्चों के स्कूल वाले जो रिक्शे आते हैं, वह भी ऐसी ही सीटी बजाते हैं। आज हमने दिन में स्कूल के टाइम पर फीं-फीं करके जो सीटी बजा दी, तो लोग समझे कि रिक्शा आ गया और दौड़े-दौड़े बस्ता लेकर बाहर आये । ···वहाँ आकर देखा, तो कुछ नहीं । बड़ा मजा आया ।' भइया हँसता है ।

'अच्छा अपनी सीटी छुटके को मत देना, नहीं तो लेकर रख लेगा ।' रीति कहती है ।

'हाँ, उसे हम नहीं देंगे ।' भइया कहता है ।

'आज तो तुमने उसे दी थी ?' रीति कहती है।

'आज वह भूरा वाला बिल्ली का बच्चा हमें नहीं दे रहा था । कह रहा था कि सीटी दो, तो बदले में बच्चा लो । तब हमने उसे दो बार बजाने के लिए सीटी दी···लेके भागने लगा···बच्चा उसकी गोद में से छूटकर धडाम् से गिरा और कें-कें करके रोने लगा ।' भइया बताता है।

'हाँ, भूरा वाला बिल्ली का बच्चा बहुत अच्छा है ।' रीति कहती है ।

'एक बिल्ली का बच्चा हमने मेले में भी देखा था···बड़ा अच्छा था ।' भइया कहता है ।

'मेले में हम नाचने वाले झूले पर बैठे थे ।बड़ी जोर से चक्करगिन्नी की तरह चलता था। हमें तो बड़ा डर लगा पहले, लेकिन बाद में खूब मजा आया ।' रीति कहती है।

'वहाँ पर तुमने गुब्बारों पर निशाना मारने वाली बंदूक देखी थी ?' भइया पूछता है ।

'गुब्बारों पर निशाना मारने वाली बंदूक ?' रीति चौंककर पूछती है।

'हाँ ! एक दीवार पर खूब सारे गुब्बारे चिपके रहते हैं। वहीं पर एक बंदूक रखी रहती है। एक आना देकर बंदूक उठा लो और गुब्बारे में धाँय से निशाना लगा दो ।···एक आदमी ने चार बार निशाना लगाया और उससे एक भी गुब्बारा नहीं फूटा। ···आये थे बड़ी शान से निशाना

ल ाने ।' भइया कहता है ।

'चुप रहो दोनों', तभी नींद में बाधा पड़ने पर पापा उन्हें घुड़ककर डाँटते हैं । दोनों सहम कर चुप हो जाते हैं । कमरा एकदम साँय-साँय हो जाता है । रीति और भइया दोनों बिस्तर में दुबक जाते हैं । कहीं पापा उन्हें थप्पड़ न मार दें···

'रीति ?' तभी पापा पुचकारते हुए पुकारते हैं ।

रीति कुछ नहीं बोलती, लेकिन उसका भइया जवाब देता, 'क्या ?'

'तुमने मेले में बंदूक से निशाना लगाया था ?' पापा पूछते हैं ।

'नहीं, लेकिन हमने धमाका खरीदकर छुड़ाया था ।' भइया बताता है ।

'और हमने भी झूला झूला था ।' रीति बताती है ।

उसी बीच पापा करवट बदल लेते हैं और उन दोनों की बातचीत फिर शुरू हो जाती है ।

'तुमने हवाई देखी, रीति ?' भइया पूछता है ।

'हवाई ? नहीं तो ।' रीति आश्चर्य से कहती है ।

'हमने देखी है । उसमें नीचे से दियासलाई लगा दो, बस···जूँ ऊ ऊ ऊ···करती हुई बादलों में चली जाती है···' भइया हाथ उठाकर समझाता है ।

'अच्छा, अब सो जाओ, तुम दोनों चुपचाप ।' पापा फिर उन दोनों से कहते हैं और अनिच्छा से वे फिर चुप हो जाते हैं ।

···आधी रात के सन्नाटे में रीति की नींद अचानक टूट जाती है । वह अनुमान लगाती है, पापा और भइये चुपचाप सो रहे हैं । मम्मी के खुर्राटों की आवाज भी सुनसान में गूँज रही है । मम्मी जब भी जोर-जोर से खर्राटे लेती हैं, तब रीति की आँख खुल जाती है । कभी-कभी वह डर भी जाती है । उस समय भी रीति सहम जाती है । उसे लगता है कि वह मम्मी की खुर्राटों के आवाज नहीं है, वरन् भालू की आवाज है । भालू···हाँ···भालू···हो सकता है, वह छत पर बैठा हो और गुर्रा रहा हो ।

···रीति एक दिन सबके साथ बनारसी बाग गयी थी । वहाँ पर चिड़ियाघर के एक किनारे पर सड़क से लगे हुए कोठरीनुमा कमरों में

भालू रहते हैं। सामने के बरामदों में सींखचों के पीछे छोटे बड़े भालू अलग-अलग तालाबों में थूथन डाले गरमी की वजह से हाँफते-हाँफते बैठे थे। पापा ने बार-बार एक-एक मूँगफली सभी भालुओं की तरफ फेंकी, जिसे उन्होंने मुँह फाड़कर रोक लिया और खा गये। रीति को बड़ा मजा आया। कभी-कभी मूँगफली पानी में गिर जाती थी और वह झपटकर खा लेता था।···

लेकिन छत पर जो भालू गुर्रा रहा है, वह? रीति की छाती धक्-धक् करने लगती है। काला-काला रीछ, गले में सफेद बालों की माला, बड़े-बड़े पंजे···लेकिन हो सकता है, वह बबर शेर हो···।

'हाँ, रीति को याद आया उस दिन बबर शेर अपनी माँद में पानी की खाई से घिरा बैठा था। पतली कमर और खूब बड़ा-सा मुँह लंबे-लंबे बाल, खूब गरजता था और जब गरजता था, तो सारा चिड़ियाघर थर्रा उठता था। वही शेर जो एक-एक बकरी को एक-एक ग्रास में खा जाता था, इस वक्त रीति को खा जाने के लिए छत पर बैठा है।···

रीति का कलेजा काँप उठता है। ···लेकिन हो सकता है वहाँ बाघ हो, हाँ, बाघ, सारे बदन में धारियाँ पड़ी हुईं। बड़ी-बड़ी चमकती हुई आँखें, खूब लम्बा-चौड़ा शरीर···बड़े-बड़े भैंसों को एक ही थप्पड़ में गिरा देने वाला, अपने नुकीले दाँतों को निकाले, जीभ लपलपाता···इस वक्त वही खतरनाक बाघ रीति को हड़पने के लिए छत पर बैठा है···

'पापा?' वह सहमकर धीरे-से पुकारती है।

लेकिन पापा कोई जवाब नहीं देते।

'पापा?' वह फिर धीरे-से आवाज देती है।

'क्या है?' पापा जागकर पूछते हैं।

'पापा छत पर बाघ बैठा है—' वह काँपती हुई आवाज में सूचना देती है।

'नहीं बेटा, सो जाओ।' पापा कहते हैं।

'अच्छा, तो शेर होगा···।' वह फिर कहती है।

'नहीं, बेटा।' पापा फिर समझाते हैं।

'नहीं, नहीं है, भालू है—' वह उन्हें विश्वास दिलाना चाहती है।

'कोई नहीं है।' पापा फिर प्यार-भरी आवाज में समझाते हैं।

'है, हमें डर लग रहा है।' वह कहती है।

पापा चुपचाप उसे उठाकर अपने पास सुला लेते हैं। वह दुबक जाती है।

रोज रात को जब पापा घर लौटते हैं, तो बच्चों के लिए कुछ-न-कुछ जरूर लाते हैं—कभी केक, कभी पेस्ट्री, कभी मिठाई, कभी खिलौना, कभी कुछ, कभी कुछ···।

आज रात भी बिस्तर पर लेट जाने के बाद रीति और भइये पापा का इंतजार कर रहे हैं।···काफी देर होती जा रही है पापा नहीं आ रहे हैं।

'मम्मी। आज पापा क्या लायेंगे ?' आज भी रीति मम्मी से पूछती है।

'चुप रहो, आज इतनी देर हो गयी, पता नहीं अभी तक क्यों नहीं आए।' मम्मी डाँटती हैं।

दोनों बच्चे सहमकर चुप हो जाते हैं। रोज मम्मी से यही प्रश्न पूछा जाता था, तब वह कुछ-न-कुछ जवाब देती थीं और अंदाज़ से बताती थीं कि आज पापा क्या लायेंगे।

काफी देर के बाद आखिरकार पापा आते हैं। रोज की तरह बच्चे उनके पास दौड़ते नहीं, धीरे-धीरे उनके पास जाकर खड़े हो जाते हैं।

'आज बड़ी देर कर दी ?' मम्मी कहती हैं।

'हाँ, आज थोड़ी देर हो गयी।' पापा जवाब देते हैं।

मम्मी के नीचे चले जाने के बाद रीति और भइये पापा का एक-एक हाथ पकड़ लेते हैं।

'पापा, आज क्या लाये हो ?' रीति धीमी आवाज़ में पूछती है। उसकी फीकी आँखें उत्तर की प्रतीक्षा में फैल जाती हैं।

'तुम बताओ, क्या लाये हैं ?' पापा दोनों को दोनों हाथों में उठाकर पूछते हैं। जब कभी वह इस तरह से पूछते थे, तो जरूर ही कोई अच्छी चीज लाये होते थे।

'पेस्ट्री।' रीति बताती है।

'नहीं।' पापा कहते हैं, 'भइया बतायेगा।'

'केक।' भइया बताता है।

'नहीं।' पापा कहते हैं, 'रीति बतायेगी।'

'मिठाई।' रीति बताती है।

'नहीं।' पापा फिर कहते हैं, 'भइया बतायेगा।'

'नहीं, नहीं, तुम बताओ।' रीति और भइये दोनों झुँझला कर कहते हैं।

पापा चुपचाप एक-एक पैकेट उन दोनों के हाथ में पकड़ा देते हैं। दोनों अपने-अपने बिस्तरों पर चले जाते हैं।

'तुम दोनों सोये नहीं, अभी?' मम्मी पापा का खाना लाकर पूछती हैं।

'सो जाओ भइये, सो जाओ रीति अब।' पापा कहते हैं।

'नहीं, तुम भी आओ।' रीति कहती है।

पापा रीति के पास पहुँच जाते हैं और उसे पुचकारकर सुलाते हैं। रीति अब मचलते हुए शिकायत करती है, 'पापा। आज हमें भइये ने मारा था।'

'अच्छा, सो जाओ, हम भइये को कल मारेंगे।' पापा समझाते हैं।

'हमने नहीं मारा था, इसने हमें मारा था।' भइया उलटे कहता है।

'अच्छा, अब दोनों चुपचाप सो जाओ।...मुँह बन्द।' पापा कहते हैं और दोनों बिस्तर में दुबक जाते हैं।

३

'पापा ! आज चलोगे न, स्कूल ? 'सवेरा होते ही रीति पूछती है।

'हाँ बेटा ! आज जरूर चलेंगे।' पापा आश्वासन देते हैं।

रीति उत्कंठा से प्रतीक्षा करने लगती है। बीसियों बार वह अपना बस्ता अलमारी से निकालती है। मम्मी ने उसमें एक स्लेट, एक किताब और एक पेंसिल रख दी थी। पत्थर की स्लेट का लकड़ी का चौखटा वह बार-बार छकर देखती है। किताब की रंग-बिरंगी तस्वीरों को वहबार-बार घूर-घूर कर देखती है। पेंसिल छूकर वह सहेजते हुए रख देती है।

...अब पापा अखबार पढ़कर उठे हैं, अब नहा चुके हैं, अब... अब...।

'रीति को तैयार कर दो।' पापा आवाज देकर मम्मी से कहते हैं।

यह सुनते ही वह फुरती से उठ पड़ती है। बस्ते को वह अलग रख देती है और ऊँची आवाज में कहती है 'मम्मी। हमें नये-नये कपड़े पहना दो। हम पापा के साथ अपने स्कूल जायेंगे।...'

हाथ मुँह में साबुन मलकर वह नहाती है, फिर उसे नये कपड़े पहनाए जाते हैं, फिर उसके बालों में नया रिबन लगाया जाता है...।'

'आओ बेटे ! खाना खा लो।' पापा खाना खाते-खाते उसे पुकारते हैं।

'नहीं, हम खाना नहीं खायेंगे।' वह पापा को बताती है। हम अपना खाना डिब्बे में रखकर स्कूल में ले जायेंगे, जैसे भइया ले जाता है।'

'स्कूल भी ले जाना। अभी तो यहाँ खा लो।' पापा कहते हैं।

'नहीं, हम स्कूल ही ले जायेंगे ।' वह फिर जवाब देती है ।

पापा कहते रहते हैं, परन्तु वह नहीं मानती । आखिरकार मम्मी उसे जबरदस्ती एक रोटी खिला देती हैं । जल्दी-जल्दी खाकर वह बस्ता लेकर स्कूल के लिए तैयार हो जाती है । पापा अभी तक नहीं खा चुके हैं । ···वह अधीरता से उनकी बाट जोहने लगती है । ···अभी पापा खाना खाकर उठेंगे, फिर अलमारी में से कपड़े निकालकर पहनेंगे, फिर मोजे, जूते पहनेंगे···फिर···।

'रीति !' पापा तैयार होकर उसे पुकारते हैं ।

वह चौंककर उठ बैठती है । पापा की उँगली पकड़ती है और उनके साथ धीरे-धीरे चल पड़ती है ।

'···पापा अभी स्कूल नहीं आया ?' रिक्शे पर बैठे-बैठे वह पापा से पूछती है ।

'बस अब आने ही वाला है ।' पापा उसकी पीठ थपथपाते हुए जवाब देते हैं ।

अपने मन में वह स्कूल के अनेक कल्पनात्मक चित्र खींचती है··· स्कूल, स्कूल, स्कूल···।

'क्यों भाई ? यहाँ पर डाली बाग कहाँ है ?' पापा एक स्थान पर रिक्शा रुकवाकर किसी आदमी से पूछते हैं ।

'डाली बाग ?' वह आदमी उत्तर देता है, 'डाली बाग तो साहब यही है ।···आपको किसके यहाँ जाना है ?'

'यहाँ पर अंधे बच्चों का कोई स्कूल है ?' पापा उससे पूछते हैं ।

'जी हाँ, साहब ! अंधों का स्कूल तो···आप इस बायीं सड़क पर चले जाइए । करीब एक डेढ़ फर्लांग के बाद आपको स्कूल मिल जायेगा ।'

रिक्शा फिर बढ़ चलता है । वह फिर अपनी कल्पना में क्रियाशील हो जाती है ।

'रोको, बस यहीं रोक लो ।' पापा एक जगह पर रिक्शा रुकवाते हैं ।

'क्यों भाई इस स्कूल के भीतर जाने का रास्ता किधर से है ?' पापा फिर किसी से पूछते हैं ।

'स्कूल तो पिछवाड़े की तरफ से जाना पड़ेगा।' वह बताता है।

'लेकिन बोर्ड तो यहीं लगा है।' पापा कहते हैं।

'जी हाँ, बोर्ड तो सिर्फ होस्टल के लिए लगा दिया गया है।···आप पिछवाड़े के फाटक से चले जाइए।'

'उस फाटक से चले चलो भाई।' पापा रिक्शेवाले से कहते हैं। रिक्शा फिर हिलता है। रीति आसपास के वातावरण में स्कूल की खोज करती रहती है।

'बस, यहाँ रोक लो।' पापा फिर कहते हैं। रिक्शा रुक जाता है। पापा जेब से पैसे निकालकर रिक्शेवाले को दे देते हैं और रीति को नीचे उतार लेते हैं। रिक्शा मुड़कर चला जाता है। रीति चारों तरफ कौतूहल से घूरती रहती है। स्कूल आ गया है। वहाँ पर उसे परछाइयाँ हिलती हुई दिखायी देती हैं। लोग इधर-उधर आते-जाते हुए मालूम देते हैं। तमाम लड़के इधर-उधर चलते-फिरते नजर आते हैं।

लेकिन वैसे नहीं, जैसे दूसरे समर्थ लोग आते जाते और चलते-फिरते हैं, बल्कि वैसे, जैसे खुद रीति चलती है, शंकित भाव से कदम उठाती हुई, चौंकती, बचती, अपाहिजों की तरह।

'क्यों बेटे ! प्रिंसिपल का कमरा किधर है ?' पापा एक लड़के से पूछते हैं।

और यह पूछने के साथ ही रीति को ऐसा लगता है कि सात-आठ भटकती परछाइयाँ टटोल-टटोलकर पैर घसीटते हुए पापा को एक साथ ही घेर लेती हैं।

'हम बताएँ, हम बताएँ' उन सबके मुँह से एकबार ही में उत्सुकतापूर्वक आवाजें निकल पड़ती हैं।

'उधर से चले जाइए, उधर सीढ़ियों के ऊपर।' कई लोग एक साथ बताते हैं, 'ऊपर चढ़कर है प्रिंसिपल साहब का दफ्तर।'

'आइए, हमारे साथ ! हम आपको पहुँचा दें।' फिर कई आवाजें अपने-आपको इस सेवा के लिए प्रस्तुत करती-सी दिखाई पड़ती हैं।

'नहीं बच्चो' पापा रीति का हाथ पकड़कर उनकी भीड़ से बचते हुए कहते हैं, 'हम चले जाएँगे,' 'तुम्हें धन्यवाद !'

रीति को ऐसा लगता है, जैसे कुछ गंदी चीजें, जो कुछ देर पहले

कीड़ों की तरह बिलबिलाती हुई सिमटकर उसके नजदीक आ गयी थीं, फिर अलग हट जाती हैं। वह एकाएक एक बहुत दुर्गन्धयुक्त घुटन के बाद धूप से सुखायी हुई ताजी हवा पाती है। लेकिन उसका मन एक उदासीन चिंता की भावना से छटपटा उठता है। उसे लगता है कि ये सब बच्चे भी उसी के वर्ग के हैं, रीति की तरह ही अपाहिज, समाज के लिए, दूसरे सभी लोगों के लिए, एक भार। प्रत्येक अलग व्यक्ति के द्वारा उपेक्षित और तिरस्कृत। ये सभी किसी से दो बातें करने के लिए उत्सुक हैं। किसी की भी सहायता करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। लेकिन ऐसा कौन समर्थ व्यक्ति होगा, जो इन अंधे कीड़ों की सहायता की अपेक्षा करेगा, इन परिवारों से ठुकराये हुए अपाहिजों की।··· तभी एक पतली दहलीज और एक सँकरे घुमावदार सीढ़ियों के रास्ते से होते हुए पापा उसे लेकर ऊपर पहुँच जाते हैं।

'प्रिंसिपल का ऑफिस किधर है?' पापा फिर किसी से पूछते हैं।

'आइए, साहब! यही है।' एक आदमी उत्तर देता है और चिक उठा देता है। पापा रीति के साथ भीतर चले जाते हैं।

'आइए, बैठिए, नमस्ते!' प्रिंसिपल कहते हैं।

'नमस्ते।' पापा जवाब देते हैं।

पापा एक कुर्सी पर बैठ जाते हैं। रीति भी उनसे भी सटकर खड़ी रहती है। वह उस समय उनकी बगल में छिप जाना चाहती है। पापा उसे उठाकर पास की दूसरी कुरसी पर बैठा देते हैं।

'बेटा, प्रिंसिपल साहब से नमस्ते करो।' पापा उससे कहते हैं।

रीति की छाती जोर से धौंकने लगती है। वह हाथ जोड़कर अपने सामने कुरसी पर बैठे हुए आदमी से सहमी हुई आवाज में कहती है, 'नमस्ते।'

'नमस्ते, नमस्ते।' प्रिंसिपल साहब जोर से कहते हैं, 'इधर आओ बेटी! तुम्हारा नाम क्या है?'

'जाओ, बेटा! प्रिंसिपल साहब को अपना नाम बताओ।' पापा रीति को कुरसी पर से उतारकर उधर बढ़ाते हुए कहते हैं।

'आओ बेटी, आओ!' प्रिंसिपल साहब उसे पुचकारते हुए पास बुलाते हैं, 'क्या नाम है तुम्हारा?'

'कुमारी रीति।' वह स्पष्ट स्वर में अपना नाम बताती है और प्रिंसिपल साहब की ओर निगाह उठाकर उनकी आकृति को समझने की चेष्टा करती है। वह उसके पापा का दिया हुआ एक कागज पढ़ने लगते हैं।

'ठीक है।' प्रिंसिपल साहब उस कागज को पढ़ने के बाद पापा को वापस कर देते हैं, 'फार्म तो ठीक है।'

'तो फिर आप इसे अपने पास रख लें।' पापा उनसे कहते हैं।

'जी नहीं, अभी आपको थोड़ी तकलीफ और करनी पड़ेगी। और वह यह कि आपको जरा गवर्नमेंट हास्पिटल तक जाना पड़ेगा।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'गवर्नमेंट हास्पिटल ?' पापा पूछते हैं।

'जी हाँ। वहाँ पर इस बच्ची का मेडिकल इक्ज़ामिनेशन होगा। फिर उसकी रिपोर्ट इस फार्म पर लिखी जायगी।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'अच्छी बात है।' पापा कहते हैं।

'जी हाँ ! यह फार्मेलिटी भी पूरी करना जरूरी है।...आप अभी हास्पिटल हो लें और टैस्ट करा कर रिपोर्ट इस पर लिखवा लें। फिर कल इस फार्म को सवेरे लेते आएँ।...कल ही इसका नाम लिख लिया जायेगा।' प्रिंसिपल समझाते हैं।

'बहुत अच्छा।' कहते हुए पापा उठ खड़े होते हैं और साथ ही रीति भी। फिर 'नमस्ते' होती है और वे नीचे आ जाते हैं।

'...क्या डॉक्टर साहब अन्दर हैं ?' पापा अस्पताल पहुँचकर चपरासी से पूछते हैं।

'जी हाँ, आपका क्या नाम है, एक परचे पर लिखकर दे दीजिए।' चपरासी कहता है।

पापा जेब से एक कार्ड निकालकर उसे दे देते हैं।

'जाइए, चले जाइए भीतर।' वह कार्ड भीतर दिखाकर कहता है।

चपरासी चिक उठा देता है। पापा रीति का हाथ पकड़कर भीतर जाते हैं और किसी को नमस्ते करके बैठ जाते हैं।

'कहिए, क्या सेवा कर सकता हूँ ?' रीति सुनती है, एक अपरिचित आवाज़ पापा से पूछती है।

'यह मेरी बच्ची है।' पापा रीति के सिर पर हाथ रखकर कहते हैं, 'इसे यहाँ के ब्लाइंड स्कूल में भरती कराना है। मैं अभी प्रिंसिपल से मिला था। उन्होंने यहाँ के डाक्टर की मेडिकल रिपोर्ट माँगी है। उसी के लिए आपको कष्ट दिया है।'

'अच्छा !' डॉक्टर साहब रीति को पुचकार कर कहते हैं, 'इधर तो आओ बेबी।'

डॉक्टर, अस्पताल, सुई, आपरेशन···रीति की आँखों की फीकी पुतली में आतंक की कालिमा छलक उठती है···वह पापा का हाथ पकड़ लेती है और डॉक्टर से अलग रहती है।

'इधर तो आओ बेबी, इधर आओ।' डॉक्टर साहब फिर उसे पुचकारते हैं।

'चली जाओ।' पापा उसका हाथ पकड़कर डॉक्टर साहब के नजदीक कर देते हैं।' वह सहमती हुई आँखों से डॉक्टर की तरफ ताकती है।

'क्या खराबी है, इसकी आँखों में ?' डॉक्टर साहब पापा से पूछते हैं।

'डॉक्टरों ने बताया था कि यह आइराइटिस और कैटेरैक्ट का मिला जुला एक बहुत कांप्लीकेटेड किस्म का केस है।' पापा बताते हैं।

'क्या यह बाई बर्थ है ?' डॉक्टर साहब फिर पूछते हैं।

'जी हाँ।' पापा बताते हैं।

'कुछ इलाज भी कराया ?' डॉक्टर साहब पूछते हैं।

'जी हाँ, पहले तो दो आपरेशन सीतापुर के आई हास्पिटल में कराये थे। उसके बाद यहाँ मेडिकल कालेज में तीन आपरेशन कराये।' पापा बताते हैं।

'अच्छा ! कोई फायदा नहीं हुआ ?' डॉक्टर साहब फिर पूछते हैं।

'कोई खास नहीं।···एक आँख में अगर बहुत जरा-सा फायदा हुआ तो दूसरी आँख में जो कुछ रोशनी पहले से थी, वह भी जाती रही। पापा बताते हैं।

'देखिए साहब···ऐसा है कि इसके मेडिकल टैस्ट के लिए आपको

यहाँ के चीफ मेडिकल ऑफिसर से मिलना पड़ेगा। वही रिपोर्ट लिखेंगे।' डॉक्टर साहब बताते हैं।

'अच्छा! आपके लिखने से काम नहीं चलेगा?' पापा पूछते हैं।

'नहीं, शायद वह मेरा लिखा हुआ नहीं मानेंगे।…आप उन्हीं से मिल लीजिए। वह उधर वाले कमरे में बैठते हैं।…यों लीजिए, मैं भी लिखे देता हूँ। पर उनको भी जरा दिखा जरूर लीजिए।' डॉक्टर साहब कुछ लिखकर पापा को दे देते हैं।

'अच्छी बात है, मैं उनसे भी मिले लेता हूँ।' पापा कहते हैं।

पापा फिर बाहर आ जाते हैं। रीति महसूस करती है जैसे अब वह फिर भीड़-भाड़ में आ गयी है। इधर-उधर लोग चलते-फिरते मालूम होने लगते हैं।

'क्या डाक्टर साहब को दिखाना है?' किसी की रूखी आवाज हवा में गूँजती है।

'हाँ।' पापा जवाब देते हैं।

'अच्छा, तो पहले उधर जाकर परचा बनवा लाइए, फिर इधर आइएगा।' वही कर्कशता इस बार भी बनी रहती है।

'परचा नहीं बनवाना है।' पापा उसे एक कागज दिखाते हुए समझाते हैं, 'इसी परचे पर कुछ लिखवाना है।'

'अच्छा, तो लाइए, यह परचा जमा कर दीजिए।…जब नम्बर आयेगा, तब अन्दर जाइएगा। उधर बैठकर इंतजार कीजिए।' कर्कश स्वर फिर गूँजता है।

पापा रीति के साथ इधर-उधर चहल कदमी करने लगते हैं। उस वातावरण में रीति को लगता है, जैसे उसका दम घुट जायेगा। वह पापा से जिद करने लगती है कि उसे गोद में ले लें। पापा उसे बहलाये रहते हैं।

कुछ देर बाद पापा किसी आदमी से पूछते हैं 'क्यों भाई, अभी तक नम्बर नहीं आया?'

'जी नहीं, जब आयेगा तो खुद ही नाम पुकारा जायगा।' एक कर्कश स्वर फिर गूँजता है।

रीति को अब भूख मालूम होने लगती है। पापा अब उसे गोद में

उठा लेते हैं और बाहर चाय वाले की दूकान पर आ जाते हैं। वह अपने डिब्बे में से बिस्कुट और मिठाई खाती है और एक कप चाय पीती है। फिर वह पापा की गोद में जाकर ऊँघने लगती है। पापा फिर भीतर जाकर डॉक्टर के कमरे के बाहर रुक जाते हैं। कुछ कर्कश आवाजें रह-रहकर हवा में गूँजती रहती हैं।

'उधर हटकर खड़े हो, जी।' एक आवाज़ आती है।

'चलो आगे, इधर कहाँ घुसे जा रहे हो ?' दूसरी आवाज़ आती है।

'अरे-अरे, क्या मेरी खोपड़ी पर सवार हो जाओगे ?' तीसरी आवाज़ आती है।

अमां तुम क्या बिल्कुल जंगली ही हो ?' चौथी आवाज़ आती है।

'...कुमारी रीति, कुमारी रीति ?' एक ऊँची आवाज़ गूँजती है और इसके साथ ही रीति चौंककर सहम जाती है। पापा भीतर जाते हैं।

डॉक्टर आले से देखते हुए कहता है 'इसका तो हार्ट बहुत वीक है।'

'जी ?' पापा चौंककर पूछते हैं।

'जी हाँ, इसे हार्ट की बीमारी है।...आप क्या डॉक्टर राय से भी मिले थे ?' डॉक्टर कहता है।

'जी हाँ, उन्होंने ही आपसे मिलने को कहा था।' पापा बताते हैं।

'इसका हार्ट...' डॉक्टर फिर बोलता है।

'जरा थॉरोली इग्जामिन कर लीजिए। अंधा बच्चा है। ब्लाइंड स्कूल में अगर भरती हो जायेगा, तो...'

'लेकिन यह एडमिशन के लिए फिट नहीं है...' डॉक्टर कहता है।

'वैसे अभी तक हार्ट की कोई तकलीफ मालूम तो नहीं हुई...' पापा बताते हैं।

'अभी तक नहीं मालूम हुई, तो आगे मालूम हो जायगी...इसका हार्ट बहुत वीक है।...यह लीजिए।' डाक्टर परचे पर कुछ लिखकर पापा को वापस कर देता है।

रीति की छाती की धड़कन फिर से तेज हो जाती है। पापा की गोद में जाकर वह उनके मुँह पर आयी तमतमाहट का अनुभव करती है। पापा उसे लेकर घर लौट आते हैं।

'ए रीति ! ए रीति !' वो देखो बंदर। चुनिया रीति के पास आती है और ताली बजाते-बजाते उसे खिलाने लगती है।

चुनिया की उमर चार-पाँच साल है। देखने में खूब गोल-मटोल है, एकदम थलथल। उसके घर में सब लोग उसे छोटी बुआ पुकारते हैं, जिससे वह काफी चिढ़ती है।

'कहाँ है बंदर ?' रीति पूछती है।

'वह देखो, वह सामने छत पर बैठा कुछ खा रहा है। अरे, वह देखो, वो दूसरा बंदर, ऐ मम्मी, देखो बंदर कोई कपड़ा ले गया है, और दाँतों से फाड़ रहा है।'

रीति उधर देखती है। दीवार पर कुछ बंदर रेंगते से मालूम हो रहे हैं। वह बंदर शायद कुछ खा रहा है और वह दूसरा शायद कोई कपड़ा फाड़ रहा है। चुनिया को अब मजा आ रहा है। वह ताली बजाती-बजाती गा रही है, 'बंदर मामा !···पहन पजामा। बंदर मामा! पहन पजामा !'

थोड़ी ही देर में अड़ोस-पड़ोस के तमाम बच्चों की भीड़ लग जाती है। सब लोग ताली बजाकर चुनिया का साथ देने लगते हैं 'बंदर मामा! ···पहन पजामा। बंदर मामा।···पहन पजामा।'

रीति के मन में कौतूहल बढ़ता है। वह भी बच्चों के साथ ऊँची आवाज में चिल्लाना शुरू कर देती है, 'बंदर मामा, पहन पजामा।'

थोड़ी ही देर में पड़ोस की छत पर रमुआ कहार बड़ी लाठी लेकर चढ़ आता है और देखते-देखते सारे बंदर भाग जाते हैं।

···चुनिया आइसक्रीम के लिए रो रही है। सारे बच्चों ने अपने-अपने पैसों से आइसक्रीम खरीदकर खायी है। चुनिया पहले ही अपने पैसों की चाट खरीद चुकी थी। दूसरी बार जब वह पैसे माँगती है तो उसे मिलते नहीं। इसलिए वह जोर-जोर से रोना शुरू कर देती है। बच्चे उसे दिखाकर अपनी-अपनी आइसक्रीम खाते रहते हैं। जब सबकी आइसक्रीम खत्म हो जाती है, तो छुटका आइसक्रीम की तीली को नचाते हुए एक नयी लय पर गाता है 'छोटी बुआ, दूध दे। थाली में मूत दे। छोटी बुआ, दूध दे। थाली में मूत दे।'

सारे बच्चे उसका साथ देते हैं और थोड़ी ही देर में एक समाँ-सा

बँध जाता है। चुनिया थोड़ी देर तक तो बारी-बारी से सभी बच्चों को देखकर उनकी रागात्मिक वृत्ति के सामूहिक ऐक्य का परीक्षण करती रहती है और उसके बाद एकाएक शेरनी की तरह पंजों के बल उचक कर छुटके पर टूट पड़ती है और दाँत किटकिटाती हुई उस पर लात-घूँसों की बौछार करने लगती है। एकदम से भगदड़ मच जाती है। थोड़ी देर तक तो छुटका उसका मुकाबला करता है और उसके बाद वही प्रिय पंक्ति ऊँची आवाज में गाता हुआ मैदान छोड़कर भाग निकलता है।

···तपती दोपहरी साँय-साँय कर रही है। मम्मी ने रीति को डाँट-डपट कर भीतर कमरे में सुला दिया है। वह बाहर जाकर खेलना चाहती है, इसलिए उसकी आँखों में नींद ही नहीं आती। मम्मी तो थोड़ी देर में खुद खुर्राटे भरने लगती है, लेकिन रीति का ध्यान बाहर ही लगा रहता है। बाहर तमाम बच्चे शोर मचा रहे हैं और लू-धूप में भी भाग-दौड़कर रहे हैं। छुटका चार-पाँच महीने की चुहिया को ले आया है और स्वयं पीठ के बल लेटकर उसे घुटनों पर उछालता हुआ जोर-जोर से गा रहा है :

'जू-जू मोटे,
नानी के झोटे।
गंगा माता नानी को दीन्ह।
नानी ने परदेसिन को दीन्ह।
परदेसिन ने एक खटिया बनायी।
खटिया गयी टूट।
नानी को खोपड़ा गया···फूट
सुई से कंडा ?···
कंडा।···
तेरी सास का पेट हंडा।'

छुटके की आवाज की गूंज धीरे-धीरे बढ़ने लगती है। उसे सुनकर रीति के होठों पर एक हँसी की लहर थिरकने लगती है। वह उस सुख का अनुमान लगाने लगती है, जो चुहिया को इस समय हो रहा होगा। जब छुटके उसे जू-जू मोटे करके खिलाता था, तो उसे भी बड़ा अच्छा

लगता था। जब 'सुई ले कंडा ?' पूछने के बाद वह 'तेरी सास का पेट हंडा' बताता था, तो पैरों को ऐसे नचाता था कि रीति उलटकर गिरते-गिरते बचती थी।

आखिर रीति से नहीं रहा जाता। मम्मी की बढ़ती हुई खुर्राटों के प्रति विश्वस्त होती हुई वह धीरे-से अपने खटोले से उतरती है और परदा हटाकर दरवाजे की सेंध में से बाहर झाँकने लगती है। छत पर कुछ नहीं दिखायी देता। न तो शोर करते उछलते-कूदते बच्चे, न छुटके और न चुहिया। सिर्फ तेज चमकदार धूप ही चारों तरफ फैली हुई लगती है और गरम हवा के झोंके दरवाजे को भड़भड़ाते रहते हैं।

'चाची!' तभी छुटका ने चुहिया को जू-जू मोटे करना रोककर ऊँची आवाज में पुकारकर कहता है, 'जल्दी से छत पर से कपड़े हटा लो…आँधी आने वाली है।'

रीति का कलेजा धक्-धक् करने लगता है। यह कौन-सी चीज होती है? आँधी?…आँधी कैसे आती है?

और तभी छत पर बच्चों का शोर बढ़ जाता है। 'आँधी आयी, आँधी आयी' की आवाजें आने लगती हैं।

'चलो हटो, सब लोग नीचे चलो' चाची कपड़े उठाकर सब बच्चों को डाँटते हुए कहती हैं, 'पीली आँधी है।'

पीली आँधी। पीली आँधी। रीति सहमते हुए बच्चों की आवाजें सुनती है। हवा की सनसनाहट धीरे-धीरे बढ़ने लगती है। टीन और दरवाजे भड़ाभड़ होने लगते हैं। थोड़ी ही देर में एक तरह का गहरा कालापन जमीन और आसमान पर छा जाता है। रीति घबराकर सेंध में से आँखें अलग हटा लेती है। लेकिन धूल तब भी उड़ती हुई कमरे में भरती लगती है।

काफी देर तक पीली आँधी की गड़गड़ाहट के बाद तेज पानी की बौछारें आने लगती हैं। वे बच्चे जो आँधी की धूल से आँखें मलते हुए इधर-उधर आड़ में हो गये थे अब पानी की बूँदों का आनंद लेने लगते हैं। छुटका अपने कपड़े फेंककर छत पर लेट जाता है और बालटे की तरह इधर-उधर लुढ़कता हुआ गाने लगता है:

'काले मेघा पानी दे। पानी दे, गुड़धानी दे।'

देखते ही देखते सभी बच्चे छत पर लोट लगाने और बौछारों में नहाने लगते हैं : 'काले मेघा, पानी दे। पानी दे, गुड़धानी दे।' की आवाज स्वरबद्ध होकर ऊँची होने लगती है।

रीति फिर दरवाजे की सेंध में से झाँकने लगती है। गठरियों की तरह छत पर लुढ़कते हुए बच्चों को देखकर वह खिल-खिल करके हँसने लगती है। एक बार वह निगाह घुमाकर पलँग की तरफ देखती है··· मम्मी अब भी गहरी नींद में सो रही हैं। उसका मन नहीं मानता है। वह धीरे से पुकारती है : 'मम्मी।'

उसे कोई उत्तर नहीं मिलता है।

वह फिर कहती है : 'मम्मी ! दरवाजा खोल दो, हम बाहर जाकर पानी में नहायेंगे।'

मम्मी इस बार भी कोई जवाब नहीं देती। रीति छोटी चौकी घसीटकर दरवाजे से सटा देती है। कुछ पल इधर-उधर टटोलने के बाद उसे साँकल मिल जाती है। हाथ से जोर लगाकर वह उसे खोल देती है और फिर धीरे-से उतरकर चौकी अलग हटा देती है। उछलते हुए कलेजे से वह बाहर आती है और सबसे ऊँची आवाज उठाती है :

'काले मेघा, पानी दे।
पानी दे, गुड़धानी दे।'

···तमाम बच्चों को वहाँ से बुलाते हुए बरामदे में एक लाइन में बैठाकर उषा उन्हें डाँटकर चुप कराती है। रीति भी लाइन की सीधान में बैठ जाती है। उषा स्कूल की मास्टरनी की तरह हाथ उठाकर गाना शुरू करती है। एक लाइन उषा गाती है और बाकी सारे लोग ताली बजाते हुए उसे दोहराते हैं 'चमचम चमेली बाग में मेवा खिलाऊँगी···'

'मेवे की डाल···' छुटके की आवाज सबसे आगे निकल जाती है।

'ए छुटके।' उषा छुटके को बिना लाइन दोहराये अगली पंक्ति गाने के लिए डाँटते हुए कहती है : 'अबकी से अगर तुम आगे गाओगे, तो खूब पिटोगे।'

गाना फिर से शुरू होता है। उषा उनमें सबसे बड़ी थी। वही हाथ उठाती है और एक खास तरह की लय का निर्देश करते हुए गाने लगती है। सारे बच्चे ऊँची आवाज में दोहराते जाते हैं :

'चमचम चमेली बाग में मेवा खिलाऊँगी।
मेवे की डाल टूट गयी, चद्दर बिछाऊँगी।
चद्दर का कोना फट गया, दर्जी बुलाऊँगी।
दर्जी की सूई टूट गई, लौहार बुलाऊँगी।
लौहार का हथौड़ा टूट गया, घोड़ा दौड़ाऊँगी।
घोड़े की टाँग टूट गयी, हल्दी लगाऊँगी।
हल्दी बेचारी क्या करे, नर्स बुलाऊँगी।
नर्स की साड़ी फट गयी. ताली बजाऊँगी···।'

'ग्रो, ग्रो···ग्रो···ओ···की ग्रावाज के साथ जोरों की तालियाँ पिटने लगती हैं। रीति भी ताली बजाते हुए फूली नहीं समाती है। ओ···ग्रो···ओ···ग्रो···।

४

'क्या हुआ ?' मम्मी पूछती हैं, 'रीति का नाम लिख गया ?'

'अभी तो नहीं लिखा···डॉक्टरी रिपोर्ट लिखवानी थी।···डॉक्टर इसे दिल की बीमारी बताता है।' पापा कहते हैं।

'दिल की बीमारी ?' मम्मी आश्चर्य से पूछती हैं।

'हाँ, कहता तो है···' पापा बताते हैं।

'तो क्या नाम नहीं लिखेगा ?' मम्मी फिर पूछती हैं।

'कल जायेंगे। नाम तो शायद लिख ही जाए। डॉक्टर ने पता नहीं क्या लिखा है, साफ पढ़ा ही नहीं जाता।' पापा बताते हैं।

'पापा। कल हम फिर स्कूल जायेंगे ?' रीति पूछती है।

'हाँ।' पापा बताते हैं।

'···आइए, आइए।' प्रिंसिपल साहब दूसरे दिन पापा को देखते ही कहते हैं।

'नमस्कार !' पापा कुरसी पर बैठते हुए रीति को भी अपने पास बैठा लेते हैं।

'क्यों रीति, कैसी हो ?' प्रिंसिपल पूछते हैं।

'बेटा, आज 'नमस्ते' नहीं की, तुमने प्रिंसिपल साहब से ?' पापा कहते हैं।

'नमस्ते !' रीति हाथ जोड़कर सामने ताकती हुई कहती है।

'नमस्ते ! नमस्ते !···क्यों साहब, आप कल हॉस्पिटल गए थे ?' प्रिंसिपल पापा से पूछते हैं।

'जी हाँ, यह देखिए···' पापा उन्हें एक कागज बढ़ा देते हैं।

'किस डॉक्टर से मिले थे, आप ?' प्रिंसिपल कागज पढ़ते हुए कहते हैं।

'पहले तो डॉक्टर राय से मिला था, उसके बाद चीफ मैडिकल ऑफिसर से।' पापा बताते हैं।

'इसमें तो क्या लिखा है, कुछ समझ में ही नहीं आता है।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'जी हाँ···मैंने भी पढ़ने की कोशिश की थी, लेकिन पढ़ नहीं पाया।' पापा कहते हैं।

'इसमें लिखा है फिट फॉर एडमिशन···न जाने क्या लिखा है ··' प्रिंसिपल पढ़ते हैं।

'जी हाँ···' पापा कहते हैं।

'खैर, हमें तो इतने से ही मतलब है कि 'फिट फॉर एडमिशन'।' प्रिंसिपल चपरासी से कहते हैं, 'लो यह फॉर्म ले जाओ और इसका नाम क्लास वन में लिखवा दो, तिवारी जी से कहकर।'

'बहुत अच्छा साहब !' चपरासी कहता है और फॉर्म लेकर चला जाता है।

'तो कल से इसे नियम से भेजा जाए ?' पापा पूछते हैं।

'जी हाँ।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'क्या समय हैं आजकल स्कूल का ?' पापा पूछते हैं।

'अभी तो सवेरे आठ से दो बजे तक है।···लेकिन हम लोग यह विचार कर रहे हैं कि इस टाइम को बदलकर साढ़े नौ से साढ़े तीन तक कर दिया जाए···वह ज्यादा ठीक रहेगा।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'फिलहाल यही समय कब तक चलेगा ?' पापा पूछते हैं।

'अभी कम-से-कम यह पूरा महीना तो इसी तरह से चलेगा ?' प्रिंसिपल बताते हैं।

'अच्छी बात है···मैं यहाँ से काफी फासले पर रहता हूँ, इसलिए सवेरे आठ बजे इसे यहाँ पहुँचाने में थोड़ी दिक्कत होगी···' पापा

कहते हैं।

'जी हाँ, लेकिन यह तकलीफ आपको सिर्फ तीन या चार दिन ही करनी पड़ेगी, ज्यादा-से-ज्यादा इस सप्ताह-भर। क्योंकि इस बीच ही हमारे स्कूल की मोटर बस तैयार होकर आ जायेगी। यह बस सर्विस 'डे स्कालर्स' के लिए फ्री है, हो सकता है कि इसके लिए हम लोग टोकेन पेमेंट एक रुपया महीना चार्ज कर लें।··· गाड़ी ठीक टाइम से आपके घर पहुँचकर बच्चे को ले आयेगी और स्कूल खत्म होने पर वापस पहुँचा आयेगी।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'अच्छी बात है। दो-चार दिन यह रिक्शे पर ही आ जायेगी··· वैसे भी अभी कुछ दिनों तक तो मुझे भी इसके साथ आना ही पड़ेगा, क्योंकि अकेली यह नहीं आयेगी।' पापा कहते हैं।

'जी हाँ, दो-चार रोज ही ऐसा हो सकता है। मगर बाद में इसकी आदत हो जायेगी···हमारे यहाँ कई लड़कियाँ और भी हैं, करीब-करीब इसीकी उम्र की।···उनमें इसका मन बहल जायेगा।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'अच्छा! यहाँ तो मुझे सिर्फ लड़के ही दिखाई दिए।' पापा कहते हैं।

'बात यह है कि साहब वे लड़कियाँ डे स्कालर्स हैं, इसलिए बस चलने के इन्तजार में हैं, उसके बाद आयेंगी···यों हमारे यहाँ इसी बिल्डिंग में एक छोटा-सा हॉस्टल भी है। उसमें इस वक्त करीब चालीस लड़के रहते हैं। लेकिन वे लोग ज्यादातर बाहर के हैं। इसके अलावा जगह की कमी की वजह से भी हम लोकल स्टूडेंट्स को हॉस्टल में नहीं एडमिट करते।···फिर लड़कियों के लिए अभी हॉस्टल की व्यवस्था है भी नहीं।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'खैर। अगर कुछ लड़कियाँ आने लगेंगी, तब तो इसका मन भी लग जायेगा।' पापा कहते हैं।

'जी हाँ, बिलकुल। इस बारे में आप बिलकुल फिक्र न करें। मुझे यकीन है कि यह खुद ही कुछ दिनों में इंटरेस्ट लेने लगेगी।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'साहब मैंने क्लास वन में कुमारी रीति का नाम लिख लिया है

और आज की हाजिरी भी लगा दी है।' तिवारी जी आकर खबर देते हैं।

'ठीक है।' प्रिंसिपल कहते हैं।

'अच्छा, तो अब मैं चलूँ। कल मैं ठीक टाइम से आने की कोशिश करूँगा, हालाँकि कुछ देर हो जाना मुमकिन है···कम-से-कम पैंतालीस मिनट का रास्ता रिक्शे से है।' पापा कहते हैं।

'कोई बात नहीं, अभी आप जिस समय तक सुविधा हो, आ जायें, फिर तो गाड़ी चलने पर टाइम ठीक हो जायेगा।' प्रिंसिपल बोलते हैं।

'अच्छी बात है, नमस्कार।' पापा कहते हैं।

'नमस्कार।' प्रिंसिपल कहते हैं।

रीति भी चलते-चलते 'नमस्ते' कहती है।

अगले दिन रीति बाकायदा तैयार होकर स्कूल जाती है। आज के दिन वह बहुत खुश मालूम होती है।

'नमस्ते प्रिंसिपल साहब!' वह कमरे में घुसते ही कहती है।

'नमस्ते, नमस्ते, रीति आओ, आइए साहब!' प्रिंसिपल स्वागत करते हैं।

'माफ कीजिएगा, थोड़ी देर हो गयी···' पापा कहते हैं।

'कोई बात नहीं, चलिए, आज आपको स्कूल दिखला दूँ पहले।' प्रिंसिपल कहते हैं।

पापा का हाथ पकड़कर रीति प्रिंसिपल के साथ चलने लगती है, कौतूहल से इधर-उधर देखती समझती हुई।

'यह देखिए, यह हमारा दफ़्तर है।' प्रिंसिपल बताते हैं।

रीति सजग हो जाती है। टाइप मशीन की खट-खट सुनायी पड़ती है। साथ ही कई आदमियों के सामने रखे कागजों की फड़फड़ाहट पंखे की साँय-साँय···

'यह देखिए, यह ब्रेल टीचिंग रूम है। इसमें हम लोग पहले क्लास से लेकर आठवें तक ब्रल मेथड से पढ़ाते हैं। अभी हमारे पास ब्रेल में छपी किताबें ज्यादा नहीं हैं, थोड़ी ही हैं, लेकिन हम लोग कोशिश कर रहे हैं

कि जल्दी ही हम ब्रेल में छपी सभी किताबें मँगवा लें···हमारे यहाँ ब्रेल की शिक्षा भटनागर साहब देते हैं। यह ब्रेल टीचिंग की ट्रेनिंग लिए हुए हैं। इनकी आँखों में भी साइट नहीं है···' प्रिंसिपल बताते हैं।

रीति की फीकी आँखें, अपने चारों ओर पड़ी हुई मेज कुरसियों पर दौड़ती हैं और कान चौकन्ने होकर प्रिंसिपल साहब की बातें सुनते रहते हैं। वह देखती है कि सात-आठ लड़के मौन बैठे हैं। मास्टर साहब भी इधर-उधर टटोलकर खड़े हो जाते हैं और प्रिंसिपल साहब की बात सुनकर उसके पापा को हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुए नमस्कार करते हैं।

'···यह क्लास सोशल स्टडीज का है। हमारे यहाँ फिलहाल यह सब्जेक्ट जवानी ही पढ़ाया जाता है और बेसिक केरीक्यूलम के हिसाब से हम लोग पढ़ा देते हैं। यह सब्जेक्ट हमारे स्कूल में शर्मा जी पढ़ाते हैं। हमारे सारे टीचिंग स्टाफ में केवल एक शर्मा जी ही ऐसे हैं, जिनकी नेत्र-ज्योति सामान्य है, अन्यथा शेष सभी अध्यापक पूर्णान्ध हैं।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'···लेकिन अन्धे विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए यदि अध्यापकगण वैसे ही न हों, तब संभवत: अधिक सुविधाजनक रहेगा।' पापा कहते हैं।

'आपका कहना ठीक है, लेकिन साहब दुर्भाग्यवश ऐसा दो कारणों से नही हो पाता। एक तो यह कि अगर हम साइटेड व्यक्तियों को ही अध्यापन कार्य के लिए रखते हैं, तो जो अन्धे बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं, इनके लिए आगे अध्यापकी करने का भी मार्ग बंद हो जाता है। ···आखिरकार इन्हें भी तो नौकरी देने का सवाल है। यह लोग भी रोजी के लिए ही पढ़ रहे हैं। वरना इन अपाहिजों के लिए और दूसरा कौन-सा सहारा है।···और दूसरी बात यह है कि कुछ विषय ऐसे हैं, जिन का अन्धे विद्यार्थियों को अन्धे अध्याकों के द्वारा पढ़ाया जाना ही ठीक और स्वाभाविक रूप में होता है। ···उदाहरण के लिए ब्रेल की शिक्षा को ही लीजिए। इसे यदि अच्छी आँखों वाला अध्यापक पढ़ायेगा, तो उसकी आँखों पर जोर बहुत कम पड़ेगा और आँखों का काम न होते हुए भी वह स्वभावत: आँखों से काम लेगा। ···इसके अतिरिक्त यह ब्रेल टीचिंग की प्रेक्टिकल प्राब्लेम्स को भी नहीं समझ सकेगा। ···इन्हीं कारणों से हम टीचिंग स्टाफ में साइटेड आदमियों को ऐज़ ए पालिसी

कम ही रखते हैं।' प्रिंसिपल कहते हैं।

रीति की ग्राँखों के सामने एक धुँधला नक्शा फिर खिंचने लगता है।···तमाम ग्रन्धे बच्चे कुरसियों पर बैठे हैं। उनके पास ग्रन्धे मास्टर साहब भी हैं। वह सबको पढ़ा रहे हैं, सभी अन्धे पढ़ रहे हैं, नहीं···उसे लगा, सब लोग ग्रपनी-ग्रपनी ग्रंधी ग्राँखों पर हाथ रखे हुए जोर-जोर से दहाड़ मारकर रो रहे हैं···वह एकदम से घबरा उठती है।

'यह क्लास केनिंग का है। दरअसल ब्लाइंड एजुकेशन में इस वक्त हम दो बातों पर खासतौर से गौर करने की कोशिश कर रहे हैं। एक तो यह कि ग्रागे चलकर यह एजुकेशन ज्यादा से ज्यादा ब्लाइंड लोगों को मुहैया हो सके ग्रौर इन लोगों को ग्रागे चलकर इसी लाइन में टीचिंग का काम दिया जा सके।···थोड़ी-बहुत पढ़ाई करने के बाद ये लोग एक ट्रेनिंग ले लें ग्रौर फिर टीचिंग करते हुए अपना जीवन यापन कर सकें।···ग्रौर दूसरे यह है कि इस एजुकेशन के जरिए हम उन्हें दस्तकारी के मामूली काम भी सिखा सकें। उनमें से एक यह केनिंग है। इसमें मामूली बुनाई से लेकर ग्रच्छे-से-ग्रच्छे किस्म की बुनाई तक सिखाई जाती है। यह भी ग्रंधों के लिए बहुत उपयोगी है, खासतौर से उन ग्रन्धे बच्चों के लिए जिनके माँ-बाप उनकी देख-भाल जिंदगी-भर तक नहीं कर सकते हैं। ग्रौर जिन्हें बहुत जल्दी ही ग्रपनी रोटी ग्रपने-ग्राप कमाने के लिए मजबूर होना पड़ता है···' प्रिंसिपल बताते हैं।

रीति देख रही है बिना बुनी कुरसियों के पास बैठे हुए तमाम ग्रन्धे बच्चे, ग्रपनी छोटी-छोटी उँगलियों से बेंत के टुकड़े नचाते, एक विचित्र प्रकार की विवशता, मुरदापन···

'··· ग्रौर दस्तकारी के मामले में हम लोग जो दूसरी चीज सिखाते हैं, वह है यह बीविंग। ग्रगर बच्चा हमारे स्कूल का ग्राठवें क्लास तक का बीविंग का कोर्स पूरा कर ले, तो वह इस लायक जरूर हो जाता है कि ग्रपने-ग्राप ही बीविंग का काम करता हुग्रा ग्रपनी रोटी कमा सके···' प्रिंसिपल बताते हैं।

रीति देखती है···लकड़ी की बड़ी-बड़ी धन्नियों में फँसाये हुए सूत के जालनुमा डोरे···जिन्हें हिलाते हुए दृष्टिहीन मानव हस्त···वे जाले जैसे ग्रँधे दानव हों ग्रौर उनमें ग्रंध बच्चों की विवश ग्रात्माएँ उलझी

हों···

'आपके यहाँ पढ़ाई तो बाकायदा हर क्लास में शुरू हो गयी मालूम होती है ?' पापा कहते हैं।

'जी हाँ, शुरू तो हो गयी है, लेकिन अभी डे स्कालर्स कोई भी नहीं आते हैं। उनकी संख्या भी करीब-करीब तीन दर्जन तो है ही। वे सब तभी आना शुरू करेंगे, जब बस चलने लगेगी।··· हम लोग तो अभी एकदम से पढ़ाई इसलिए नहीं शुरू कर रहे हैं, क्योंकि वैसा कर देने से बाद में आने वाले विद्यार्थियों की हानि होगी।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'यह तो खैर ठीक ही है···' पापा कहते हैं।

''और यह देखिए, यह थोड़ी-सी जगह हमारे पास और है गार्डननुमा। यह बच्चों के खेलने-कूदने के लिए है। अभी यहाँ केल-कूद की थोड़ी ही चीजें हैं, लेकिन बाद में कुछ झूले वगैरह और लग जायेंगे·· हमारी कोशिश तो यही है कि इसी साल लग जाएँ। ···लेकिन इसमें बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं। ···असल में यह स्कूल समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित किया जाता है, पर वैसे यह शिक्षा विभाग के अधीन है। हमें छोटी-सी-छोटी बात के लिए दोनों विभागों के अधिकारियों का मुँह जोहना पड़ता है और मंजूरी लेनी पड़ती है।··· इसीलिए यहाँ की वर्किंग बहुत स्लो है।···' प्रिंसिपल कहते हैं।

लेकिन रीति यह सब कुछ नहीं सुनती। उसकी फीकी आँखों के सामने एक बहुत ही मजेदार दृश्य नाच उठता है। चारों तरफ छोटे-छोटे झूले लगे हैं, चक्कर लगे हैं, घूमने बाले घोड़े हैं··· और उन पर तमाम बच्चे झूल रहे हैं, नाच रहे हैं, सवारी कर रहे हैं, इधर-उधर भाग रहे हैं, दौड़ रहे हैं, खेल रहे हैं, कूद रहे हैं, सीढ़ी पर चढ़कर फिसल रहे हैं, कड़े पकड़कर पेंग भर रहे हैं···

'···भइये तुम्हारे स्कूल में झूला है ?' रीति घर आते ही पूछती है।

'झूला ?' भइया चौंकता है।

'हाँ, झूला।' रीति विश्वास के साथ कहती है।

'नहीं।' भइया जवाब देता है।

'हमारे स्कूल में है। ···और घोड़ा भी, और चक्कर भी, और···' रीति बताती है।

'हट्···झूठी ।' भइये को विश्वास नहीं होता ।

'नहीं, सचमुच है···अच्छा, पापा से पूछ लो···पापा, ओ पापा, बताओ, हमारे स्कूल में झूला नहीं लगा है ?' रीति पूछती है ।

'हाँ, लगा है ।' पापा बताते हैं ।

'और घोड़ा ?' रीति पूछती है ।

'वह भी पापा बताते हैं ।

'और चक्कर ?' रीति पूछती है ।

'हाँ, चक्कर भी लगा है ।' पापा कहते हैं ।

'और सीढ़ी ?' रीति पूछती है ।

'हाँ, सीढ़ी भी है ।' पापा हँसने लगते हैं ।

'देखो, अब माने, पापा ने भी कह दिया । हम कह नहीं रहे थे कि इतनी चीजें लगी हैं ।' रीति भइये से कहती है ।

'अच्छा बताओ तुम झूली थीं, झूले पर ?' भइया पूछता है ।

'नहीं ।' रीति जवाब देती है ।

'घोड़े पर चढ़ी थीं ?' वह फिर पूछता है ।

'नहीं ।' रीति जवाब देती है ।

'चक्कर पर बैठकर नाची थीं ?' वह फिर पूछता है ।

'नहीं ।' रीति जवाब देती है ।

'सीढ़ी पर चढ़कर फिसली थीं ?' भइया फिर पूछता है ।

'नहीं ।' रीति जवाब देती है ।

'तो फिर ? सिर्फ लगे रहने से ही क्या होता है ?' भइया पूछता है ।

'हम कल झूलेंगे···आज हमारे प्रिंसिपल साहब ने हमें सारा स्कूल दिखाया था, हम उनके साथ गाने वाले कमरे में गये थे, वहाँ पर मास्टर साहब गाना सिखा रहे थे, सब लोगों को···तुम्हारे यहाँ गाना थोड़े ही सिखाया जाता है । हमारे यहाँ तो सिखाया जाता है ।' रीति बताती है ।

···स्कूल ले जाने वाली मोटर आयी है । ड्राइवर पों-पों करके बड़ी देर से हार्न बजा रहा है । चपरासी की आवाजें दरवाजे पर सुनायी दे रही हैं ।

'आते हैं···।' पापा आवाज देकर कहते हैं।

मम्मी रीति को जल्दी से तैयार कर देती हैं। पापा रीति का हाथ पकड़ कर नीचे आते हैं। लम्बी सी बस दरवाजे के पास खड़ी हुई है। रीति उसमें पापा के साथ बैठ जाती है। प्रिंसिपल साहब भी बैठे हैं।

'आज पहला दिन है, इसलिए कुछ देर हो गयी।' प्रिंसिपल साहब पापा से कहते हैं, 'दो एक दिनों में रूट तय हो जाने पर फिर देर नहीं हुआ करेगी। मेरा अंदाज है कि आपके यहाँ बस ठीक सात चालीस पर आ जाया करेगी।'

'कोई बात नहीं···हम लोग सात से आठ बजे तक तैयार बैठे रहे। फिर रीति के कपड़े बदलवा दिये।···मैं समझा शायद आज भी किसी वजह से गाड़ी न आ सकेगी।' पापा कहते हैं।

'नहीं, ऐसा कैसे हो सकता था। गाड़ी तो आज जरूर आती। हाँ, देर-सवेर की जरूर दूसरी बात थी। लेकिन यह परेशानी भी ज्यादा से ज्यादा एक दो दिनों की ही है, बस।' प्रिंसिपल बोलते हैं।

'क्या नम्बर है, आपके डे स्कालर्स का?' पापा पूछते हैं।

'कुल सत्ताईस है, जिनमें से एक या दो शायद न आयें, बाकी तो सभी आयेंगे।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'लड़कियों की संख्या कितनी है?' पापा पूछते हैं।

'लड़कियाँ चार हैं। इनमें से शायद एक इस साल न आये। बाकी तीन तो चलेंगी ही।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'अच्छा है, तब तो रीति का मन धीरे-धीरे जल्दी ही लग जायगा।' पापा कहते हैं।'

'अजी वाह! इसमें भी कुछ शुबहा है। इसका मन तो खूब लगेगा। बस जरा सारा कार्यक्रम रोटीन में आने की बात है।' प्रिंसिपल कहते हैं।

रीति देख रही है···मोटर एक जगह रुकती है, क्लीनर दरवाजा खोलता है। सड़क के किनारे बिजली के खम्भे के पास खड़ा हुआ एक लड़का धीरे-धीरे हवा में टटोलता हुआ आगे मोटर की तरफ बढ़ता है। बस में पीछे की सीट पर बैठा हुआ क्लीनर हाथ बढ़ाकर उसे सहारा देता है। लड़का ऊपर चढ़ आता है और आसपास ढूँढ़कर एक खाली सीट पर बैठ जाता है। फटाक् से बस का दरवाजा बन्द होता है और

इंजन की घरघराहट के साथ ही गाड़ी फिर आगे बढ़ जाती है।

'क्यों ड्राइवर ! अब कहाँ रुकना है ?' प्रिंसिपल पूछते हैं।

'अब साहब, नाके पर ?' ड्राइवर बताता है।

'क्यों, वहाँ से किसे लेना है ?' प्रिंसिपल पूछते हैं।

'वहाँ से साहब लाजो को।' ड्राइवर बताता है।

'अच्छा, हाँ।' प्रिंसिपल कहते हैं।

आगे मोड़ पर आते-आते बस फिर रुक जाती है। रीति ध्यान से देखती है, एक बूढ़े आदमी का हाथ पकड़े एक छोटी लड़की खड़ी है। धीरे-धीरे वह आगे बढ़ती है। क्लीनर हाथ पकड़कर उसे भी बस पर चढ़ा लेता है। झटाक् की आवाज के साथ ही गाड़ी आगे बढ़ जाती है।

'इसी लड़की का नाम लाजो है ?' पापा पूछते हैं।

'जी हाँ।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'यह किस क्लास में पढ़ती है ?' पापा पूछते हैं।

'यह भी अभी पहले में ही है। लास्ट इयर फेल हो गयी थी।' प्रिंसिपल बताते हैं।

'आओ बेटा ! तुम लाजो के पास बैठ जाओ।' पापा रीति से कहते हैं।

पापा रीति को उठाकर लाजो की सीट पर बैठा देते हैं।

'लाजो, तुम रीति का हाथ पकड़ लो।' पापा कहते हैं।

रीति कौतूहल से अपना हाथ आगे बढ़ा देती है। लाजो का हाथ धीरे से उठता है और हवा में टटोलता हुआ रीति के हाथ पर आकर पड़ जाता है। रीति देखने की चेष्टा करती है। उससे कुछ बड़ी लड़की लाजो, छोटे कटे हुए बाल, रिबन, घेरेदार फ्राक···लाजो···

'लाजो···?' वह धड़कते हुए कलेजे से पुकारती है।

'हाँ···।' लाजो जवाब देती है और रीति के हाथ को ठीक से थाम लेती है।

रीति का मन पुलक उठता है। लाजो भी बोलती है। वह उससे बोलेगी।

'तुम कुछ नहीं देख पाती हो···?' वह पूछती है।

'हाँ, कुछ भी नहीं।' लाजो जवाब देती है।

एक झटके के साथ मोटर फिर रुक जाती है। पीछे की सीट पर बैठा हुआ क्लीनर उठता है और हाथ से एक और अंधे बच्चे को पकड़कर भीतर बैठा लेता है। फटाक् की आवाज के साथ दरवाजा बन्द होता है और गाड़ी फिर चल पड़ती है।

'आओ बेटी। तुम भी इधर आकर बैठ जाओ', नयी आयी बच्ची से पापा कहते हैं और उसे उसकी सीट से उठाकर रीति के पास बैठा देते हैं।

'तुम्हारा क्या नाम है?' रीति का उत्साह अपनी आयु की दो लड़कियों को देखकर बढ़ता है और वह पूछती है।

'राधा।' वह जवाब देती है।

'राधा।' रीति सुनती है और उसे अच्छी तरह देखती है। वह बच्ची सलवार कुरता पहने हुए है। रीति उसके कपड़े में बने हुए रंगीन डिजाइन को पहचानने की कोशिश करती है और उससे कहती है 'लो, राधा, हमारा हाथ पकड़ लो।'

राधा हाथ बढ़ाकर रीति का हाथ पकड़ लेती है। तीनों बच्चियां एक-दूसरे से मजबूती से सटकर बैठ जाती हैं, ताकि बस के चलने या रुकने पर झटके से कोई सीट पर से नीचे न लुढ़क जाय। तमाम नये-नये बच्चे चढ़ते रहते हैं और बस उसी तरह रुक-रुककर आगे बढ़ती रहती है।

तमाम चक्करदार मोड़ों के बाद एक स्थान पर बस एक तेज भरभराहट के साथ कुछ दूर पीछे खिसकती है।

'स्कूल आ गया।' अनुभवी राधा की सूनी आँखें एक प्रकार के अव्यक्त गर्व से भरकर चमक उठती हैं। उन तीनों बच्चियों में वही सबसे बड़ी है। वह तीसरी क्लास में है। लाजो पिछले साल से पहले ही क्लास में फेल हो जाने के कारण रुकी हुई है। इस साल भी वह पहली ही क्लास में रहेगी। और रीति तो इसी साल आयी है। वह तो पहली क्लास में ही नाम लिखायेगी। राधा की जिम्मेदारी ज्यादा है।

बस के इंजन की भरभराहट घटती-बढ़ती रहती है और अन्त में वह स्कूल के सँकरे फाटक में घुसकर रुक जाती है।

रीति का स्कूल जाना शुरू हो जाता है। रोज सबेरे सात बजे बस

सामने बड़े चौराहे पर आकर रुक जाती है। रीति तैयार होकर नौकरानी चुनिया के साथ वहाँ पहुँच जाती है। दोनों बस में सवार हो जाती हैं। रीति रह-रहकर बगल में लटका हुआ बस्ता टटोलती रहती है। उसमें अभी कुछ नहीं है, न किताब, न कापी, न स्लेट, न तख्ती। लेकिन फिर भी उसमें बहुत कुछ है। हाँ उसमें एक छोटा-सा डिब्बा है। उसमें मीठा जैम और मक्खन लगे दो टोस्ट हैं।, दो बिस्कुट और एक मिठाई। एक फल भी रोज डिब्बे में रखा जाता है। कभी केला, कभी सेब, कभी संतरा, कभी अमरूद। रीति याद करती है···आज मम्मी ने एक बरफ़ी रखी है टोस्ट और बिस्कुट के साथ। डिब्बे के अन्दर है। गरी की बरफ़ी खूब मीठी होती है। ···और डिब्बे के बाहर उसके हाथ में एक संतरा आ जाता है। झोले में इधर-उधर लुढ़कता रहता है। वह टटोलकर देखती है। हाँ, यही संतरा है। वह बुदबुदाती है··· 'सं···त···रा···?' हाँ, संतरा ही है। मीठा होगा, कभी-कभी खट्टा होता है, खूब खट्टा। दाँत किटकिटाने लगते हैं। लेकिन यह संतरा बड़ा है, मीठा होगा, हाँ मीठा ही होना चाहिए। उसकी जीभ चलने लगती है और उसे खट्टे मीठे संतरे का स्वाद याद आ जाता है। और यह स्वाद आते ही उसे भूख भी लग आती है।···भूख···हाँ, लेकिन यह संतरा तो वह खाने की छुट्टी में खायगी। अभी तो दूध डबल रोटी खाकर वह घर से निकली है।

एक तेज झटके साथ ही चीं-चीं-चीं करती हुई बस रुक जाती है। रीति चौकन्नी होकर ताकती है, बस का दरवाजा खुलता है और रामदीन कंडक्टर हाथ बढ़ाकर एक बच्चे को ऊपर खींच लेता है। रीति देखती है···एक अँधियारा आकार, यही शायद कोई बच्चा है।

'चलो !' रामदीन चिल्लाता है। घर्र-घर्र की तेज आवाज के साथ बस चल पड़ती है।

'शिवराम ?' पीछे बैठा एक बच्चा पूछता है।

'हाँ।' शिवराम जवाब देता है, और टटोलता हुआ एक सीट पर बैठ जाता है।

तो यह शिवराम था, रीति सोचती है। उसकी कल्पना में एक अंधे बच्चे की आकृति उभरने लगती है। दोनों हाथ हवा में उठाये वह टोहता हुआ चला जा रहा है, एक अंधी दुनिया में···शिवराम।

पों, पों, पों, पों। भारी भीड़ के बीच में धीमी रफ़्तार में बस बढ़ती चली जाती है। तमाम जगहों पर थोड़ी देर के लिए रुकती और बच्चों को बैठाती। रीति को उनका क्रम याद हो गया है। शिवराम, हरखू, दयापरशाद, छोटी, मैकू, गुल्लन, रामनिवास, लाजो, श्यामा, मोहन···।

अजीब-अजीब रास्तों से होकर बस गुजरती है। कहीं खूब भीड़, कहीं खूब सन्नाटा, न मालूम कौन-कौन-से मुहल्लों में और कौन-कौन-सी सड़कों से गुजरती हुई वापस स्कूल पहुँचती है: डाली बाग, गोखले मार्ग, पेपर मिल, निशातगंज, न्यू हैदराबाद, यूनिवर्सिटी, डालीगंज, हुसैनाबाद, चौक, चौपटियाँ, अकबरी दरवाजा, नक्खास, नादान महल रोड, रकाबगंज, नाका हिंडोला, चार बाग, ए० पी० सेन रोड, हुसैनगंज, कौंसिल हाउस, नरही, सिंकदर बाग फिर डाली बाग...

बस में बैठे-बैठे रीति का सिर भन्नाने लगता है। सारे शहर का चक्कर काट कर जब बस स्कूल पहुँचती है, तब तक खिड़की से आने वाली ठंडी हवा के झोंकों से उसे झपकी आने लगती है। स्कूल के फाटक में घुसते ही जैसे हलचल मच जाती है। रामदीन दरवाजा खोलकर कोयले की बोरी की तरह से एक-एक बच्चे का हाथ खींच-खींचकर उतारने लगता है और डाँटना शुरू कर देता है:

'ए शिवराम, एक मिनट रुका नहीं जाता, तुमसे। हरखु, उतरते क्यों नहीं, होल्ट की तरह रास्ता रोके मुँह ताक रहे हो। दया परशाद, क्या कोई रेलवे स्टेशन है, जो तुमको गाड़ी छोड़ कर चली जायगी। एक दूसरे पर चढ़े क्यों बैठ रहे हो। जल्दी कदम बढ़ाओ···छोटी···चलो मैकू, हटो गुल्लन, आगे बढ़ो, रास्ता दो, रामनिवास, क्या बात है. तुम आज जनवासे की चाल क्यों चल रहे हो, चलो लाजो, आओ श्यामा, बढ़ो, बढ़ो मोहन, जल्दी करो।'

बस से उतरकर अब बच्चे संकरी सीढ़ियों पर चढ़ते हुए ऊपर पहुँच जाते हैं। सीढ़ियाँ चलते वक्त रीति एक हाथ से दीवार को पकड़े रहती है और उसका दूसरा हाथ चुनिया के हाथों में रहता है। सीढ़ियाँ खत्म होते ही बायें हाथ मुड़ना पड़ता है। सामने एक लम्बा-सा बरामदा है। उसके बगल में लगे हुए पाँच कमरे हैं। पहला कमरा प्रिंसिपल का है, जिन्हें बच्चे 'साहब' कहते हैं। उसके बाद फिर चार कमरों में क्लास

लगते हैं।

'सीधे लाइन में खड़े हो, सब लोग।' तिवारी मास्टर सबको हिदायत देते हैं। सब बच्चे पीछे लगे हुए छज्जे को टटोल कर एक लाइन में खड़े हो जाते हैं और अगल-बगल वालों को टटोलकर देख लेते हैं। होस्टल में रहने वाले तथा पैदल आने वाले लड़के भी लाइन में हो जाते हैं।

इसी वक्त एक तेज़ कर्कश स्वर सुनकर बच्चों में सन्नाटा छा जाता था। तिवारी मास्टर हाज़िरी लेना शुरू कर देते थे। ऊँची आवाज में वह बोलते थे : 'गयादीन ?'

'जी साहब !' किसी कोने से एक महीन आवाज आती थी।

'दया परशाद ?' फिर वह चीखते थे।

'जी साहब !' एक और दबी-सी आवाज आती थी।

रीति का कलेजा धक्-धक् करने लगता था। सूने अँधियारे को ताकती हुई वह कान लगाए सुनती रहती थी।

'कुमारी रीति ?' अचानक उसके कान में तिवारी मास्टर की आवाज़ गूँज उठती थी।

'जी साहब।' वह हाथ उठाकर कह देती थी।

बारी-बारी से सबके नाम की पुकार हो जाने पर हाजिरी खत्म हो जाती थी। फिर प्रार्थना शुरू होती थी।

५

यह ब्रेल का क्लास है। घंटी बजते ही रीति लाजो का हाथ पकड़े हुए दूसरे बच्चों के साथ वहाँ पहुँच जाती है। धीरे-धीरे टटोल-टटोल कर सब लोग कुरसियों पर बैठ जाते हैं। रीति अनुभव करती है कि सब लोग हवा में ही टटोल कर चीजों को समझते हैं। आहट अंधों की इस दुनिया में बहुत बड़ी चीज है। जरा सी कोई भी आहट होते ही सबके कान खड़े हो जाते हैं।

'कौन कौन बैठा है ?' कुरसी मेज खिसकाने का शोर गुल कम होते ही मास्टर साहब पूछते हैं।

सारे बच्चों में खुस फुस होने लगती है।

'तुम बताओ' मास्टर साहब सबसे किनारे की कुरसी की तरफ इशारा करते हुए पूछते हैं, 'उधर कौन है, बोलो ?'

'दया परशाद' एक बच्चा अभ्यस्त आवाज़ में बोलता है।

उसके बाद ? मास्टर साहब पूछते हैं, तुम्हारे बगल में ?

'हरखू।' दूसरी आवाज़ आती है।

'फिर मास्टर साहब पूछते हैं।

'लाजो।' जवाब आता है।

'फिर ?' मास्टर साहब पूछते हैं।

'...' कोई आवाज़ नहीं आती।

'फिर उसके आगे ?' मास्टर साहब पूछते हैं।

'...' कोई आवाज़ फिर नहीं आती।

'उसके आगे कौन है ?' मास्टर साहब कुछ झुँझलाहट के साथ पूछते हैं, 'तुम्हारे बगल में कौन है ?'

'रीति ।' लाजो जवाब देती है ।

'रीति ? मास्टर साहब पूछते हैं ।

'जी' लाजो जवाब देती है ।

'नया नाम लिखा है ?' मास्टर साहब फिर पूछते हैं ।

'जी' लाजो फिर जवाब देती है ।

'रीति ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'तुम्हारा नाम अभी लिखा है ?'

'...' कोई जवाब नहीं आता ।

'बोलो, रीति बोलो । मास्टर साहब तुमसे पूछ रहे हैं । जवाब दो ।' लाजो उसकी हिम्मत बँधाती है ।

'जी मास्साब ।' रीति धड़कते कलेजे से जवाब देती है ।

'शावास ।' मास्टर साहब कहते हैं । फिर पूछते हैं, 'रीति के बाद कौन है ? नाम बताओ ।'

'शिवराम ।' जवाब आता है ।

'उसके बाद कौन है ? मास्टर साहब पूछते हैं ।

'...' कोई जवाब नहीं आता ।

'और कौन है ?' मास्टर साहब फिर पूछते हैं ।

'और कोई नहीं है ।' शिवराम जवाब देता है ।

'क्यों दो लड़के और थे ?' मास्टर साहब पूछते हैं ।

'वह आज नहीं आये ।' शिवराम जवाब देता है ।

'अच्छा ठीक है ।' मास्टर साहब जैसे अपने मन में याद करते हैं, 'दया परशाद, हरखू, लाजो, रीति, शिवराम...और बाकी दो लड़के आज नहीं आए ।'

'देखो बच्चो' मास्टर साहब कहते हैं, 'तुम लोगों ने अपने-अपने घरों में तमाम किताबें देखी होंगी । ये किताबें बढ़िया चिकने कागज पर रंगीन तस्वीरों के साथ छपी रहती हैं । इन पर जो कुछ छपा होता है, उसको वे लोग ही पढ़ सकते हैं, जिनको भगवान् ने आँखें दी हैं । हम लोग उन किताबों को नहीं पढ़ सकते हैं, उन तस्वीरों को नहीं देख सकते हैं । लेकिन तुम्हें मालूम है कि दुनिया में आजकल आदमी ने बहुत

तरक्की कर ली है और वह बहुत आगे बढ़ गया है।'

यहाँ पर मास्टर साहब थोड़ी देर रुकते हैं, जैसे आहट से कुछ सुनने-समझने की कोशिश कर रहे हों, फिर बोलते हैं, 'तो बच्चो अभी तक तो अंधे लोगों की कोई जिंदगी नहीं थी, वे लोग भी जानवरों की तरह किसी तरह जीते रहते थे और जानवरों की ही मौत मर जाते थे। लेकिन अब दुनिया भर के अंधों में यह भावना आ रही है कि उन्हें भी अपने पैरों पर खड़े होना चाहिए। उन्हें दूसरों की दया पर जीवित नहीं रहना चाहिए। दूसरों के टुकड़ों पर नहीं पलना चाहिए। इसीलिए ऐसे तमाम स्कूल दुनिया के सभी देशों में धीरे-धीरे खोले जा रहे हैं, जहाँ अंधों को कोई ऐसा काम सिखाया जा सके या इस तरह से पढ़ाया लिखाया जा सके, जिससे वे लोग धीरे-धीरे अपनी रोटी कमा सकें।'

यह कहते-कहते मास्टर साहब फिर रुक जाते हैं। ऐसा लगता है, जैसे हँस रहे हों और हँसते-हँसते ही फिर कहते हैं, 'देखो बच्चो, मुझी को देखो, मैं ही पढ़ लिखकर यहाँ मास्टर बन गया हूँ। अब मुझे अपने खाने पीने के लिए दूसरों का मुँह नहीं जोहना पड़ता है।...तो बच्चो मैं तुमसे यह कह रहा था कि अब हमारे देश में भी ऐसी किताबें छपने लगी हैं, जिन्हें हम अंधे लोग पढ़ सकें। इस तरह की किताबों को 'ब्रेल' कहते हैं। यह एक लिपि है, जो अंधों की होती है। इसमें मोटे कागजों पर आलपीन के दूसरे सिरे की तरह छोटी-छोटी बिंदियाँ उभरी रहती हैं। उन्हीं बिंदुओं की संख्या और सीधान के अनुसार हम लोग अक्षरों और मात्राओं को जोड़कर पढ़ते हैं।'

रीति बड़े ध्यान से सुन रही है। मास्टर साहब कितनी बातें बता रहे हैं।

'यह देखो, पहले मैं तुम्हें ब्रेल की पहली किताब दिखाता हूँ।... यह देखो।' कहते हुए मास्टर साहब अपने हाथों में ली हुई किताब को आगे बढ़ाते हैं। सभी बच्चे अपनी कोमल उँगलियों से उसका स्पर्श करते हैं। रीति भी कौतूहलपूर्वक अपना हाथ बढ़ाती है। एक लंबी चौड़ी मोटी सी किताब जिस पर अँधौड़ियों के समान उभरे हुए बिंदु ही किसी लिपि का बोध कराते हैं। रीति सोचती है कि भइये की किताब तो वाकई में इससे बिल्कुल अलग तरह की थी। छोटी सी, चिकना कागज

रंग-बिरंगी तस्वीरें। लेकिन···यह किताब। न तो इसमें वैसी तस्वीरें हैं न वैसी छपाई, जैसे दफ्ती का बंडल सिलकर बाँध दिया गया हो।

'अच्छा बच्चो, देखो अपनी-अपनी किताब खोलो, हाँ, देखो, यह दूसरा पन्ना है, जहाँ से किताब शुरू होती है। तुम लोगों ने किताब खोल ली? कौन बैठा है किनारे, तुम बोलो?' मास्टर साहब पूछते हैं।

'एक के बाद एक करके कई आवाजें आती हैं, 'जी, मास्साब।'

'अच्छा देखो, ध्यान से उँगली फिराओ, और बिंदियाँ गिनो··यह है 'अ'। ···कहो 'अ'।' मास्टर साहब कहते हैं।

'अ', कुछ बच्चे कहते हैं, 'आ'।'

'नहीं, 'अ' 'मास्टर साहब शुद्ध करते हैं, 'अ' से अमरूद।'

रीति चौंक पड़ती है। 'अ से अमरूद।' यही तो भइये की किताब में भी लिखा है। 'अ' से अमरूद। लेकिन भइये की किताब तो खूब बढ़िया, चिकनी, रंग-बिरंगी थी, और यह किताब खुरदुरी-सी एकदम, घटिया···

'यह 'आ' है।' 'रीति सुनती है, मास्टर साहब बता रहे हैं, 'आ', 'आ' से आम।'

'आ' से आम। रीति अपनी उँगली किताब पर फिराती हुई सोचने लगती है, 'आ से आम।' यह भी भइये की किताब में लिखा है। 'अ' से अमरूद भी और 'आ' से आम भी।

'इ' से इमली। 'मास्टर साहब आगे कहते हैं।

'कैसी अजीब किताब है' रीति महीन-महीन बिदुओं पर उँगली फिराती हुई पढ़ने में ध्यान लगाती है। लेकिन 'इ' से इमली। खट्टी-खट्टी, खूब खट्टी इमली। उसके घर के बगल में इमली का पेड़ है, जिसकी टहनियाँ उसकी छत पर लटकी रहती हैं और उनमें से इमली के कतारे गिरते रहते हैं, कभी हरी इमली, कभी लाल इमली। खूब सारे कतारे छोटे बड़े।

'ई' से ईख। 'मास्टर साहब कहते हैं, 'देखो ध्यान से 'ई' से ईख।'

'ईख!' रीति की समझ में नहीं आता। ईख, वह बोल पड़ती है, 'ईख क्या होती है मास्टर साहब?'

'ईख नहीं जानती हो?' मास्टर साहब कहते हैं, 'ईख माने गन्ना,

कभी गन्ना चूसा है तुमने, गन्ने का रस पिया है ?'

'हाँ, हाँ' रीति जवाब देती है। उसे याद आता है, छुटके एक दिन गन्ना चूस रहा था और हाँ, एक दिन पापा ने उसे अमीनाबाद में गन्ने का रस पिलाया था। मीठा मीठा, शरबत की तरह।

'उ' से उल्लू।' मास्टर साहब आगे बताते हैं, लेकिन रीति अभी मीठे गन्ने के रस में ही खोई रहती है और घंटा खत्म हो जाता है।

६

रोज शाम को रीति पापा के साथ बाजार घूमने जाती है।

'पापा हम तैयार हो जायें ?' आज भी वह पूछती है।

'नहीं बेटा' पापा लेटे हुए कहते हैं, 'आज हम बहुत थके हुए हैं, कल चलेंगे।'

'नहीं, आज चलेंगे।' वह मचलने लगती है।

'कल चलना बेटा।' पापा फिर समझाते हैं, 'कल ले चलेंगे।'

'नहीं, नहीं' वह रूआँसी होकर कहती है, 'हम आज ही चलेंगे।'

पापा कुछ नहीं बोलते। वह भी मुँह लटकाकर उनके सामने ही बैठ जाती है।

'अच्छा चलो।' थोड़ी देर बाद पापा कहते हैं।

'क्या ?' वह चौंक कर पूछती है, 'तैयार होएँ ?'

'हाँ' पापा कहते हैं।

वह उमँग के साथ उठती है। आज वह लाल वाली नई फ्राक पहनेगी। बालों में भी लाल रिबन लगायेगी। और जूता···लेकिन उसके जूते का फीता तो सवेरे भइये ने निकाल कर अपने जूते में लगा लिया था। वह उदास हो जाती है।

'तुम बाजार से अपने लिए एक नया फीता ले आना। मम्मी उसे तैयार करते हुए समझाती है।

'ठीक है' वह सोचती है लेकिन साथ ही चिल्लाकर पापा से भी कह देती है, 'पापा हमें आज एक नया फीता दिलवा देना, हमारा फीता

भइये ने ले लिया है।'

'अच्छा दिलवा देंगे।' पापा लेटे-लेटे ही जवाब देते हैं।···

'तो जल्दी से उठकर तैयार तो हो' वह पापा से कहती है, 'देखो हम तैयार हो गये हैं।'

'अच्छा' कहकर पापा उठते हैं और धीरे-धीरे कपड़े बदलने लगते है।

'आज हमको पापकार्न दिलवाना।' घर से निकलते-निकलते वह पापा से कहती है।

'अच्छा' पापा कहते हैं और उसका हाथ पकड़े चलते रहते हैं।

वह मन ही मन पापकार्न का स्वाद लेने लगती है।···छोटे से लिफाफे में पापकार्न सिले हुए होंगे।···वह किनारे से लिफाफा खुलवा लेगी पापा से फिर एक-एक दाना निकाल कर खाएगी, थोड़ा फीका, थोड़ा नमकीन।···पिछली बार जब पापा ने उसके लिए पापकार्न लिया था, तो उसने गरम-गरम ताजे दाने भरकर लिफाफे में दे दिये थे।—बड़े अच्छे होते हैं, नमकीन—। वह संतुष्ट हो जाती है।

···लेकिन···भइया बता रहा था कि आज स्कूल में उसने आइसक्रीम लेकर खाई थी।···आइसक्रीम···उस दिन रीति ने भी आइसक्रीम खाई थी, मीठी-मीठी, ठंडी-ठंडी, एक दिन पापा ने उसे कप वाली आइसक्रीम खिलवाई थी। एक छोटा सा कप, उसमें आइसक्रीम भरी हुई और खाने के लिए लकड़ी का एक छोटा सा चम्मच।···चम्मच को कप में डालो, उसमें थोड़ी-सी आइसक्रीम निकाल लो और जीभ पर रखकर चाट ली।···और हाँ, एक बार पापा ने उसे किसी रेस्टोरेंट में आइसक्रीम खिलाई थी। बैरा एक प्लेट में आइसक्रीम का टुकड़ा रख गया था, जैसे डबल रोटी का टोस्ट काटकर रखा हुआ हो।···रीति अपने आप नहीं खा पाई थी, तो पापा ने चम्मच से काट काटकर उसे थोड़ी थोड़ी आइसक्रीम खिलाई थी।···

'पापा ?' वह धीरे से पुकारती है।

'हाँ', पापा पूछते हैं, 'क्या बात है ?'

'आज हमें पापकार्न मत दिलवाओ' वह कहती है, 'आइसक्रीम दिलवा दो।'

'अच्छा' पापा कहते हैं।

...लेकिन...रीति को कुछ दुविधा हो जाती है... आइसक्रीम तो ज़रूर अच्छी होती है, लेकिन पापकार्न...नमकीन पापकार्न...कभी कभी खूब चटपटे लगते हैं।...पैकेट में सिले हुए पापकार्न...

'पापा ?' वह फिर पुकारती है।

''हाँ', पापा फिर पूछते हैं, 'क्या बात है ?'

'पापा' रीति समझाती है, 'ऐसा करो, पहले हमें पापकार्न दिलवा दो। उसे हम खाएँगे और उसमें से भइये को भी खिलाएँगे...और हमें अभी एक आइसक्रीम खिला दो।'

'अच्छा', पापा हँस कर पूछते हैं,' कौनसी आइसक्रीम खाओगी ?'

'कप वाली आइसक्रीम' वह उमंग में भरकर जवाब देती है।

'या और कोई-सी खाओगी ?' पापा पूछते हैं।

'और कौन-सी आइसक्रीम ?' वह पूछती है।

'साफ्टी आइसक्रीम।' पापा कहते हैं।

'साफ्टी आइसक्रीम ?' वह चौंककर पूछती है।

'हाँ, साफ्टी आइसक्रीम।' पापा रहते हैं।

'खाएँगे।' वह कहती है और कल्पना करने लगती है कि साफ्टी आइसक्रीम कैसी होगी। एक तो आइसक्रीम होती है आरेंज, जो सींक में लगी रहती है। उँगलियों से सींक पकड़े रहो और आरेंज आइसक्रीम चूसते रहो।...और दूसरी आइसक्रीम होती है कप वाली क्वालिटी आइसक्रीम। बाएँ हाथ में कागज की छोटी सी गिलसिया पकड़े रहो और दाहिने हाथ से लकड़ी का चम्मच पकड़े थोड़ी थोड़ी आइसक्रीम निकाल-निकालकर खाते रहो। और तीसरी यह...साफ्टी आइसक्रीम... साफ्टी।...पता नहीं कैसी होगी साफ्टी आइसक्रीम।

'पापा' रीति फिर पूछती है, 'साफ्टी आइसक्रीम कैसी होती है ?'

'अभी खाकर देखना', पापा कहते हैं और अपनी कल्पना में फिर आइसक्रीम का स्वाद लेने लगती है।...

'दो साफ्टी। बाजार में एक जगह पर रुककर पापा कहते हैं।

'दो साफ्टी' ये शब्द रीति के कानों में पड़ते हैं और वह चौकन्नी हो जाती है। उसकी फीकी आँखें अपने सामने के धुँधलके में जैसे कुछ

टटोलने लगती है। वहाँ पर लोहे के एक बड़े संदूक जैसी कोई चीज खड़ी है। शायद मशीन है, क्योंकि उसमें से घरर्-घरर् की आवाज हो रही है। शायद उसी मशीन में आइसक्रीम बन रही है।···

'लो' पापा एक आइसक्रीम उसके हाथ में दे कर दूसरी खुद खाने लगते हैं। रीति एक बार जीभ से चाटती है। वाह, स्वाद तो बढ़िया है। यह तो सभी आइसक्रीमों से अच्छी है। वह एक चटकारा और लेती है। फिर अपने हाथ में पकड़ी हुई आइसक्रीम को देखने-समझने की कोशिश करती है। यह आइसक्रीम तो एक झुनझुने की तरह है। झुनझुने की तरह उसे हाथ में पकड़े रहो और ऊपर से चाटते रहो। ऊपर एक प्याले की तरह बना है। उसी में आइसक्रीम भरी है। और यह···हाँ, एक पतला-सा कागज का रूमाल था। उसी में लपेट कर उसे साफ्टी मिली थी। साफ्टी···साफ्टी आइसक्रीम···झुनझुने वाली आइसक्रीम···

···'इसे भी खा लेना' पापा उसे समझाते हैं और झुनझुने की तरफ इशारा करते हैं।

'इसे भी ?' वह आश्चर्य से पूछती है, झुनझुने को भी ?'

'हाँ' वह कहते हैं।

'हट्।' वह कह देती है। कभी कभी पापा इसी तरह हँसी करते हैं। क्या वह इतनी बुद्धू है। उसे खुशी होने लगती है और उसके चेहरे पर हँसी खेलने लगती है।

'हाँ, हाँ, उसे भी खा लेना' पापा कहते हैं, 'फेंकना मत,···देखो, हम भी खा रहे हैं।'

वह पापा की तरफ ताकती है। सचमुच वह उस झुनझुने को चबा रहे हैं। अरे, उसे ताज्जुब होता है। वह अपने दाँतों से उस झुनझुने का एक हिस्सा कुतरती है। उसे कुछ कुरमुरा-कुरमुरा सा लगता है, फीका फीका, लेकिन काफी स्वादिष्ट।···और वह धीरे-धीरे सारी आइसक्रीम और झुनझुना खा जाती है।···वाह यह आइसक्रीम बढ़िया थी।

'चलो।' वह पापा का हाथ पकड़ कर बाजार में घूमने लगती है। रंग-बिरंगी दुकानें, जलती-बुझती रोशनियाँ, मोटरें, बसें और तमाम सवारियाँ, आदमी, औरतों और बच्चों की भारी भीड़।···सहसा

एक स्थान पर पापा रुक जाते हैं। वह फिर चौकन्नी हो जाती है उसकी नाक में एक खास तरह की खुशबू आती है। वह समझ जाती है कि पापकार्न की दुकान आ गई है। शीशे का एक बड़ा सा संदूक है। उसके अंदर चुरुर-चुरुर करती हुई कोई छोटी सी मशीन लगी हुई है। उसी में भुट्टे के दाने भर दिये जाते हैं और थोड़ा सा मसाला डाल दिया जाता है। उसी में से भुन-भुनकर दाने नीचे गिरते रहते हैं। वहीं पर एक लड़का बैठा रहता है वह उन्हें लिफाफों में भर कर देता जाता है।··· पापा रीति के हाथ पर पैंतीस पैसे रख देते हैं।···ठीक है। पहले दुकान के अंदर जा कर एक कूपन खरीदना पड़ता है। फिर उस कूपन को दिखा कर पापकार्न का लिफाफा मिलता है। ··रीति यह तरीका जानती है। वह पैसे कस कर मुट्ठी में पकड़ लेती है। पापा का हाथ पकड़े हुए दुकान के अंदर जाती है। बड़ी जिम्मेदारी का अनुभव करती हुई पैसे काउँटर पर रख देती है। फिर काँपती हुई आवाज में कहती है, 'सुनिए, एक कूपन दे दीजिए पापकार्न के लिए।'

दुकानदार पैसे उठाकर रख लेता है और पास ही रखे हुए लोहे के तार में से एक कूपन निकालकर उसके हाथ में पकड़ा देता है। वह कूपन लेकर बाहर की तरफ चलने लगती है। कूपन को देखने की कोशिश करती है। उस पर काला-काला-सा कुछ छपा है।··शायद यह छपा होगा कि 'रीति कूपन लेकर आ रही है, इसे एक लिफाफा पापकार्न का दे दो।' वह खुश होती है और जल्दी से बाहर आ कर पापकार्न का लिफाफा उस कूपन के बदले ले लेना चाहती है।···लेकिन पापा उसका हाथ पकड़े हुए दुकान के बीच में ही रुक जाते हैं। शायद उनका कोई दोस्त मिल गया है। रीति भी रुक जाती है। सोचती है, कुछ दोस्त पापा के बहुत अच्छे हैं। उसको खूब दुलार करते हैं। लेकिन कुछ दोस्त बड़े खराब हैं। घंटों बक-बक करते रहते हैं। वह उकता जाती है।·· लेकिन यहाँ शायद कोई दोस्त नहीं मिला है। वह छोटी-सी दुकान में भरी हुई बड़ी भीड़ में आहट लेने की कोशिश करती है।··पापा किसी से बात नहीं कर रहे हैं, बल्कि उसी को कुछ इशारा करके बता रहे हैं। क्या कह रहे हैं?···वह समझने की कोशिश करती है।

'रीति।' सहसा पापा धीरे से पुकारते हैं।

'हाँ।' वह चौकन्नी हो जाती है। कूपन को और कस कर अपने हाथ में दबा लेती है।

'जरा नीचे देखो।' पापा कहते हैं।

वह उत्सुकता से नीचे ताकती है। क्या है? क्या है वहां? क्या चीज देखने को पापा कह रहे हैं?

'क्या है?' वह पूछती है।

'तुम बताओ।' पापा पूछते हैं।

वह फिर देखने की कोशिश करती है। नीचे कुछ ढेर-सा पड़ा है। कुछ काला-काला सा, कुछ सफेद-सफेद सा। शायद कोई काला कपड़ा पड़ा है, शायद सफेद रुई का बंडल पड़ा है। या·· या···कुछ और है। पता नहीं क्या है।

'हमें नहीं मालूम।' वह निराश होकर पूछती है, 'तुम बताओ क्या है?'

बिल्ली।' पापा कहते हैं।

'बिल्ली?' वह चौंक उठती है, 'क्या बिल्ली?'

'हाँ' पापा कहते हैं और उसके साथ झुक कर बैठ जाते हैं।

वह फिर देखने की कोशिश करती है। वही काला सफेद ढेर। पूछती है, 'यह बिल्ली है या बिल्ली का बच्चा?'

'बिल्ली का बच्चा।' पापा जवाब देते हैं।

'मुन्ना सा?' वह पूछती है।

'हाँ, बहुत मुन्ना सा।' पापा कहते हैं। उसका डर कुछ कम होता है। बिल्ली तो बड़ी खतरनाक होती है। दाँत से चबा कर खा जाय, या नाखूनों से फाड़कर खा जाय।···लेकिन बच्चा तो यह सब नहीं करेगा। वह उसकी आकृति का अनुमान लगाती है।

'छू कर देखें?' वह पापा से पूछती है।

'हाँ, हाँ।' पापा कहते हैं।

वह धीरे से हाथ बढ़ा कर छूती है। गुलगुला-गुलगुला सा लगता है। उसे अच्छा लगता है। लेकिन तभी वह मुँह उठा कर ताकता और एक तरफ चल देता है। रीति भी पापा के साथ दूकान के बाहरी हिस्से में आ जाती है।

'ए, हमें एक लिफाफा दे दो पापकार्न का।' रीति कूपन ग्रागे बढ़ाती हुई कहती है।

पापकार्न की मशीन के सामने बैठा हुग्रा लड़का उससे कूपन लेकर उसे लिफाफा दे देता है। वह उसे सहेज कर चलने लगती है। फिर वही बाजार की भीड़भाड़, मोटरों बसों की तेज रोशनी, जगमगाहट...रीति को बड़ा ग्रच्छा लगता है। वह ग्राइसक्रीम खा चुकी है ग्रौर पापकार्न का लिफाफा उसके हाथ में है। इसमें से थोड़ा-सा वह घर जा कर भइये को देगी, थोड़ा-सा...लेकिन...ग्रच्छा देखा जायेगा।...ग्रभी तो बाजार घूम ले।

'ग्रब चलें घर थोड़ी देर बाद पापा पूछते हैं।

'हाँ, चलो।' वह कहती है।

रिक्शे पर बैठते ही वह लिफाफे का ऊपरी सिरा टटोलती है।

'क्या खोल दें ?' पापा पूछते हैं, 'खाग्रोगी ग्रभी।'

'हाँ।' वह निःसंकोच कह देती है, 'घर पर भइया सब खा जायगा।'

'ग्रच्छा' कह कर पापा लिफाफे का एक हिस्सा खोल देते हैं।

'थोड़ा सा खा लें' वह एक दाना मुँह में रखती हुई कहती है, 'थोड़ा सा भइये के लिए ले चलेंगे।'

'ग्रच्छा' पापा कहते हैं। रीति का हाथ ग्रौर मुँह चलता रहता है। लिफाफा थोड़ा-थोड़ा खाली होने लगता है। एक बार जो रीति ग्रपना हाथ लिफाफे में डालती है, तो देखती है, पापा भी चुपके से खुले हुए लिफाफे में हाथ डाल कर पापकार्न के दाने निकाल रहे हैं।

'ऐ ऐ ऐ ऐ' वह मुनमुनाती है' 'यह क्या कर रहे हो ? तुम भी चुरा-चुरा कर खा रहे हो ?'

पापा कुछ नहीं बोलते, चुप-चुप हँसते रहते हैं। रीति उनकी हँसी भाँप लेती है।

'हम कहाँ खा रहे हैं ?' हँसी रोक कर पापा कहते हैं।

'नहीं-नहीं, तुम खा रहे थे चुपके-चुपके।' वह कहती है ग्रौर लिफाफा सम्हाल कर दूर हटा लेती है, 'ग्रच्छा जाग्रो, ग्रब हम सब खा लेंगे, भइये के लिए नहीं ले चलेंगे।' यह कहती हुई वह पूरा लिफाफा ग्रपनी मुट्ठियों में उँडेल कर मुँह में भर लेती है।

स्कूल में सबसे अच्छा क्लास संगीत का होता था। इस क्लास में न कुरसी थी, न मेज, न कोई किनाब, न कोई और झंझट। सब जूता खोलकर क्लास में बिछी दरी पर बैठ जाओ। बाकी लड़के-लड़कियाँ भी भीड़ लगा कर बैठ जाते हैं, जैसे सत्यनारायण की कथा हो रही हो। मास्टर साहब धोती, कुर्ता टोपी, पहने पहले से ही बैठे रहते हैं। उनके सामने एक हारमोनियम रखा रहता है और बगल में दो तबले पड़े रहते हैं।

'अच्छा, सब लोग आ गए?' अंधे संगीत मास्टर भीड़-भाड़ और शोर शराबा बढ़ने के बाद पूछते हैं।

'जी मास्साब?' एक विद्यार्थी जबाब देता है।

'अच्छा, तुम कौन हो, राम परशाद?' मास्टर साहब उसी आवाज़ की दिशा में मुँह घुमा कर पूछते हैं।

'जी मास्साब।' फिर वही जवाब आता है।

'लो, तुम तबला ले लो। 'मास्टर साहब टटोलते हुए दोनों तबले खिसकाते हैं। राम परशाद भी टटोलते हुए ही दोनों तबले सम्हाल लेता है। फिर मास्टर साहब कहते हैं, 'अच्छा देखो बच्चो, तुमने 'स रे ग म प ध नी स' सुना होगा।'

'जी मास्साब।' जो विद्यार्थी पिछले साल से पढ़ रहे थे और फेल हो कर इसी क्लास में रुक गए थे, वे उत्तर देते हैं, 'सुना है।'

'तो बच्चो' मास्टर साहब इन पहचानी हुई आवाजों को सुन कर हताश होते हुए कहते हैं, ये सातों स्वर हैं और इन्हीं से सारे संगीत की रचना हुई है।'

'जी मास्साब।' वे ही पुराने विद्यार्थी फिर उत्तर देते हैं, बाकी नए विद्यार्थी हक्के-बक्के बैठे रहते हैं।

'अच्छा देखो,' मास्टर साहव फिर कहते हैं, 'अब मैं इन्हीं सात स्वरों को हारमोनियम पर बजाता हूँ, तुम लोग ध्यान से सुनना।'

'जी मास्साब' विद्यार्थी जवाब देते हैं।

'स अ अ' मास्टर साहब गाते हैं और हारमोनियम बजाना शुरू करते हैं। हारमोनियम की आवाज गूँजती रहती है और राम परशाद तबला पकड़े बैठा रहता है।

'अच्छा' थोड़ी देर तक आलाप करने के बाद मास्टर साहब विद्यार्थियों से कहते हैं, 'अब तुम लोग भी मेरे साथ गाना, लेकिन ध्यान रखना कि तुम्हारी आवाज़ मेरी आवाज़ और हारमोनियम की आवाज़ के बराबर ही रहे। अच्छा तो गाओ : स···अ···अ···अ···अ···।'

अलग-अलग किस्म की तमाम आवाज़ें एक साथ गूँजने लगती हैं, जैसे रेंक लगाई जा रही हो, 'स···अ···अ···अ···।'

'ऐसे नहीं, ऐसे नहीं।' मास्टर साहब हारमोनियम बंद कर देते हैं, 'पहले मेरी और हारमोनियम की आवाज़ सुनो और फिर उसी के साथ गाओ।···सुनो : स···अ···अ···अ···। ···अब गाओ : स···अ···अ ···अ।'

फिर जोर की रेंक लगती है और मास्टर साहब हारमोनियम बंद करके गाना रोक देते हैं। कहते हैं, अच्छा रुक जाओ, बच्चो।···इस तरह नहीं।···अब पहले मैं गाता हूँ फिर मेरे साथ अलग-अलग एक-एक विद्यार्थी गायेगा···अच्छा, तो हर परशाद, तुम मेरे साथ गाना।··· पहले सुनो, स···अ···अ···अ···। ···सुना ?···अब गाओ मेरे साथ, कहो, स···अ···अ···अ।'

'स···अ···अ···अ।' हर परशाद मास्टर साहब की आवाज़ में आवाज़ मिला कर गाता है।

'हाँ।' मास्टर साहब हारमोनियम रोक कर समझाते हैं, 'जिस तरह से हर परशाद ने गाया है, उसी तरह से तुम लोगों को भी आवाफ़ मिलाकर गाना चाहिए। समझे ?···अच्छा, और कौन है, चलो बोलो।'

रीति को मजा आ जाता है इस क्लास में। वह उत्साह में बढ़ कर बोल उठती है, 'मास्साब हम गाएँ ?'

'हम कौन ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'तुम कौन हो ?'

'जी मास्साब रीति।' वह उत्तर देती है।

'अच्छा, गाओ तुम।' मास्टर साहब कहते हैं, 'आवाज़ मिलाकर गाना,' 'स···अ···अ···।'

रीति भी गाने लगती है, 'स···अ···अ···अ···।'

'नहीं, नहीं, इतनी तेज आवाज़ में नहीं, मास्टर साहब समझाते हैं, 'जरा धीमी आवाज़ में गाओ, जैसे मैं कहता हूँ : स···अ···अ···।'

रीति कुछ हल्की ग्रावाज़ में गाती है, 'स···ग्र···ग्र···ग्र···।'

'हाँ, शाबास' मास्टर साहब कहते हैं, 'ग्रौर कौन है ? रीति के बाद ? बोलो।'

···थोड़ी देर बाद घंटा बजता है ग्रौर एकदम से भगदड़ मच जाती है। सारे बच्चे एक-दूसरे से धक्कम-धक्का करते हुए बाहर की तरफ भाग चलते हैं। एकाध गिर भी पड़ते हैं।···रीति को अपना एक जूता बड़ी मुश्किल से टटोलने पर दरवाजे के पास पड़ा मिलता है। किसी तरह पहनकर वह लाजो के साथ चल पड़ती है।

···अगला क्लास ब्रेल का है। दूसरे कमरे में सारे विद्यार्थी पहुँचकर टटोलते हुए कुरसी मेज पर बैठ जाते हैं। मास्टर साहब भी ग्रपनी किताब सम्हाल लेते हैं।

'ग्रच्छा बच्चो, देखो ग्रब दो-दो ग्रक्षर मिल कर किस तरह से शब्द बन जाते हैं।' मास्टर साहब ग्रपनी किताब पर उँगलियाँ फिराते हुए ऊँची ग्रावाज़ में पढ़ते हैं, देखो, क, बड़ा 'ग्रा,' 'का' ···ग्रौर 'न' क्या बन गया···कान ?'

सब बच्चे जवाब देते हैं, 'कान।'

रीति ग्रपना कान छूकर देखती है, 'कान।'

'यह देखो' मास्टर साहब पढ़ाते हैं, इ ग्रौर क···क्या बना···कि ग्रौर तो बड़ा ग्रा क्या बना···ता ग्रौर ब···तो यह हो गया···किताब।'

'किताब' कई बच्चे बोल पड़ते हैं। रीति चौंकती है, किताब, जैसी यह किताब है। ग्रौर हाँ, जैसी भइये की किताब है···किताब।'

'क बड़ी ई क्या हुग्रा···की ग्रौर इसके बाद ल···तो क्या हुग्रा कील।' मास्टर साहब जोर दे कर पुकारते हैं···कील।'

रीति बुदबुदाती है 'कील' जिसको दीवार में ठोंक कर तस्वीरें ग्रौर कैलेंडर टाँगे जाते हैं, कील, लोहे की कील।

'क छोटा उ, कु, ग्राधा त फिर त बड़ा ग्रा क्या हुग्रा ?' मास्टर साहब बताते हैं···'कुत्ता।'

'कुत्ता !' रीति फुसफुसाती है, कुत्ता, वही कुत्ता, छोटा-सा झबरे बालों वाला, जो कें कें कर रहा था। कुत्ता···।

'क बड़ा ऊ···कू.' मास्टर साहब पढ़ते हैं, 'ग्रौर प···क्या हुग्रा···

कूप···कूप ।'

'कूप क्या मास्साब ?' एक बच्चा बोल उठता है ।

'कूप नहीं जानते हो ?' मास्टर साहब बताते हैं, 'कूप···कूप···कूप माने कुआँ ! कुआँ तो जानते हो न, कुआँ जिसमें से पानी भरा जाता है।'

रीति सहम जाती है। उसके घर के पास एक बड़ा भारी कुआँ है, एक-बार छुटके के कहने से वह वहाँ गई थी । छुटके ने उसे कुएँ में झाँक कर खूब डराया था, 'रीति कुआँ है । इसमें झाँकना मत । खूब गहरा है । इसमें खूब अँधेरा है । काला-काला पानी चमक रहा है ।'

और तभी किसी ने पानी में डोल फेंका था, 'झम्म···म···म' रीति डर गई थी और उसने खूब कस कर छुटके का हाथ पकड़ लिया था । छुटके उसे बता रहा था कि एक बार एक बच्चा उस कुएँ में गिरकर मर गया था ।

रीति सहम उठती है, फुसफुसाती है···'कूप, कुआँ ।'

'क छोटी ए···के और ल, बड़ा आ···ला' मास्टर साहब पढ़ा रहे हैं, 'बोलो क्या हुआ···केला ।'

'केला' रीति चौंक उठती है, केला, गुलगुला, गुलगुला, मीठा । आज उसकी मम्मी ने खाने के डिब्बे के साथ एक केला भी रखा है । उसका मन नहीं मानता । उसकी प्रबल इच्छा होती है कि वह केला खा ले अभी निकाल कर । ···वह इधर-उधर देखती है । कुछ छाया मूर्त्तियाँ उसके अगल-बगल बैठी हैं । सामने एक छाया बैठी है, जिसे सब मास्टर साहब कहते हैं । ···वह धीरे-से अपने सामने रखे हुए झोले को निकाल कर उसमें हाथ डालती है । खाने के डिब्बे के बगल में एक केला रखा हुआ है । वह सोचती है कि उसे निकाल कर खा ले, लेकिन वह चौंक पड़ती है और जल्दी से अपना हाथ झोले से निकाल लेती है ।

'कौन है, लाजो के बाद ?' मास्टर साहब कई बार पूछ चुके हैं, 'लाजो, तुम्हारे बाद कौन है ?'

'रीति है मास्साब !' लाजो जवाब देती है ।

'रीति ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'तुम हो रीति लाजो के बाद ?'

'जी मास्साब ।' वह तत्परता से उत्तर देती है ।

'तुम पढ़ रही हो न ?' मास्टर साहब पूछते हैं ।

'जी मास्साब' वह फिर कहती है।

'शाबास। ···ध्यान से पढ़ती रहना।' मास्टर साहब अपनी किताब को उँगलियों से टोहते हुए कहते हैं, 'क' 'बड़ी ए'—'कै', 'द' 'बड़ी ई' दी, क्या हुआ ?···कैदी ?'

'मास्साब', रीति बीच में ही फिर पूछती है, कैदी क्या होता है ?'

'कैदी नहीं जानती हो ?' मास्टर साहब सब बच्चों की तरफ बारी-बारी से चेहरा घुमाते हुए कहते हैं, 'कैदी उस आदमी को कहते हैं, जो चोरी-बदमाशी करता है और पुलिस उसे ले जाकर जेल में बंद कर देती है।'

रीति सहम उठती है। चोर···। उसे याद आता है, एक बार वह पापा के साथ बाजार जा रही थी तो दो पुलिस वाले एक आदमी के दोनों हाथों को रस्सी से बाँधे लिए जा रहे थे। वह चोर था···कैदी था···कैदी।

'उधर कौन है ?' मास्टर साहब की उँगलियाँ फिर किताब पर घूम रही हैं, 'देखो, क छोटा ओ क्या हुआ···को, य ल, यल, क्या बना···कोयल।'

रीति के चेहरे पर से कैदी का आतंक हट जाता है और एक मीठी-मीठी मुस्कान बिखर जाती है। कोयल···हाँ, कोयल···कैसे बोलती है··· कू···कू···कू···कू···छुटका कोयल की खूब नकल उतारता है···कू···कू कू···कू···। और हाँ, भइया भी कूकता है···कू···कू···कू···कू। रीति की इच्छा होती है, वह भी कूके···कू···कू···कू···कू···। लेकिन···

'क' 'बड़ा ओ' क्या हुआ—'कौ', मास्टर साहब आगे बोलते हैं, 'व' बड़ा 'आ' क्या हुआ—'कौवा'।

'कौवा' रीति फिर सोचती है, कौवा, काला-काला कौवा···रोज छत पर सवेरा होते ही न जाने कितने कौवे जमा हो जाते हैं, काँव, काँव, काँव, काँव···पहले रीति को कौवे से डर लगता था, लेकिन अब तो कौवे उससे डरते हैं। वह झूठ-मूठ उन्हें ढेले से मारने का नाटक करती है। हट्, हट्, कौवे हट् और कौवा फड़फड़ करता हुआ उड़ जाता है।

पिंकी के यहाँ गाय आई है। भूरी-भूरी गाय। रामू लाया था। रस्सी में बाँध कर। आते समय खूब 'बाँ···आँ···आँ', 'बाँ···आँ···आँ'

कर रही थी। उसी से सटा हुआ बछड़ा चल रहा था। प्यारा-प्यारा सा, छोटा सा, सफेद-सफेद। ऐसा मालूम होता, जैसे काई बकरी हो। आते-ही-आते पिंकी उसका नाम भी रख देती है।' 'गन्नू।' फिर खुशी में भर कर पुकारती है 'गन्नू, ओ गन्नू।'

लेकिन गन्नू अपने आप में ही अभी डरा हुआ-सा लगता है। पिंकी की मम्मी बताती हैं, 'अभी नया है। बाद में समझ जायगा और अपना नाम भी जान जायगा। तब पुकारने से देखेगा।'

'और गाय का नाम क्या है।' रीति पूछती है।

'गाय का नाम ?' पिंकी चौंक जाती है, 'गाय का क्या नाम होगा। ···गाय का नाम है गाय।'

'नहीं गाय का नाम भी रखो।' रीति समझाती है, 'जब तुमने बछड़े का नाम रखा है, तो तुम गाय का नाम भी रखो।'

'कह तो दिया कि गाय का नाम गाय है।' पिंकी फिर कहती है।

'गाय नाम कैसे हो सकता है ?' रीति शंका करती है, 'गाय तो बहुत-सी होती हैं, इस गाय का कुछ नाम रखो।'

पिंकी और रीति की बातचीत सुन कर पिंकी की बड़ी बहन शोभा हँस पड़ती है। फिर दोनों को समझाती हुई कहती है, 'इस गाय का नाम है गन्नी !'

'गन्नी।' रीति और पिंकी दोनों चौंक पड़ती हैं।

'हाँ गन्नी !' शोभा फिर कहती है, 'गाय का नाम है गन्नी और बछड़े का नाम है गन्नू।'

वाह, रीति खुश हो जाती है। सचमुच दोनों ही नाम शोभा को ठीक से मालूम हैं। गाय का नाम है गन्नी और बछड़े का नाम है गन्नू। गाय का बेटा बछड़ा होता है। इसी लिए उसका नाम गन्नू है। गन्नी उसकी माँ का नाम है।

पिंकी के आँगन में बल्लियां लगा कर उस पर फूस का छप्पर डाला जा रहा है।

रीति पिंकी से पूछती है, 'यह क्या बन रहा है ?'

'यह ?' पिंकी की आंखों में चमक और आवाज में शान आ जाती है, 'यह गन्नी और गन्नू के लिए कमरा बन रहा है।'

'गन्नी और गन्नू के लिए कमरा ?' रीति फिर चौंकती है।

'हाँ' पिंकी जवाब देती है, 'इसमें गन्नी और गन्नू दोनों रहेंगे।'

अच्छा, तो यह बात है। रीति सोचती है। ठीक ही तो है। गन्नी और गन्नू कहाँ रहेंगे। मकान के अंदर पिंकी के मम्मी पापा के कमरे में थोड़े ही रहेंगे। इसीलिए उनके लिए यह अलग कमरा बन रहा है। इसी में गन्नी और गन्नू रहेंगे। दोनों माँ बेटे इसी में रहेंगे।

'लेकिन ये दोनों सोयेंगे कहाँ ?' रीति पूछती है, 'इनके लिए बड़ा सा पलँग बनवाया जायगा क्या ?'

'हट्' पिंकी समझाती है, ये लोग तो जानवर हैं। जानवर पलँग पर थोड़े ही सोते हैं।'

'फिर कहाँ सोते हैं ?' रीति पूछती है।

'जमीन पर सोते हैं और कहाँ सोयेंगे' पिंकी जवाब देती है।

रीति कल्पना करती है। रात का समय है। सब लोग अपने-अपने पलँग पर सोये हैं। और यहाँ पर आँगन में बने हुए अपने कमरे में गन्नी और गन्नू भी जमीन पर सोये हुए हैं। ···लेकिन बिस्तर···इन लोगों को सरदी तो लगेगी ही।

'और इनका बिस्तर कहाँ है ?' रीति फिर पूछती है, 'जमीन पर ये लोग क्या बिछायेंगे ?'

'हट्' फिर पिंकी समझाती है, 'ये लोग तो खाली जमीन पर इसी तरह सोते हैं। ये लोग बिस्तर पर थोड़े ही सोते हैं।

'लेकिन तब तो इन लोगों को खूब सरदी लगती होगी।' रीति कहती है।

'हाँ' बीच में ही फिर शोभा बोलती है, 'रात में इन्हें बोरा उढ़ा दिया जायगा।'

'बोरा ?' रीति पूछती है।

'हाँ, बोरा' पिंकी पुष्टि करती हुई कहती है, 'रात को जब इन्हें सरदी लगेगी, तब इन दोनों को गेहूँ वाले बोरे उढ़ा दिये जायेंगे।'

गेहूँ वाले बोरे। रीति सोचती है। जैसे वह रजाई ओढ़ती है, वैसे ही गन्नी और गन्नू गेंहू वाले मोटे बोरे ओढ़ेंगे, रजाई की तरह।

'अलग हटो, बिटिया अलग हटो। 'रामू कोई चीज लादे हुए

आता है।

शोभा रीति को कंधे से पकड़ कर पीछे हटा लेती है। रीति देखती है, कोई बड़ा भारी मिट्टी का बर्तन रामू लाद कर आता है। बड़े भारी तसले की तरह। और उसे छप्पर के नीचे एक कोने में रखता है।

'यह क्या है?' रीति पूछती है।

'यह नाँद है' शोभा बताती है।

'नाँद।' रीति पूछती है, 'नाँद क्या?'

'यह गन्नी और गन्नू के खाना खाने का बर्तन है।' शोभा बताती है, 'इसमें इन दोनों को खाना खिलाया जायेगा।'

बाप रे, इतना बड़ा बर्तन। रीति सोचती है। हाँ, इतना बड़ा बर्तन इस लिए है, क्योंकि गन्नी और गन्नू दोनों के पेट खूब बड़े-बड़े हैं। हम लोगों के पेट छोटे हैं इसलिए हम लोगों के खाने के बर्तन छोटे होते हैं।...रीति जल्दी से लौट पड़ती है। मम्मी को जाकर वह सारी सूचनाएँ देगी। पिंकी के यहाँ गाय और बछड़ा आए हैं। गाय का नाम गन्नी और बछड़े का नाम गन्नू है। दोनों के लिए एक कमरा बना है और दोनों रात को बोरा ओढ़ कर सोएँगे। दोनों के पेट बहुत बड़े हैं। इसी लिए उनके खाने के लिए खूब बड़ा बर्तन आया है।...

सवेरे-सवेरे रीति उठ कर देखती है, खूब धूप निकल आई है। सब लोग चाय पीकर नाश्ता कर चुके हैं। वह चुपके से जाकर चौंके में से प्लेट के नीचे छिपाई हुई एक रोटी निकालती है, जो उसने रात को ही चुपके से वहाँ रख दी थी।

'रीति, मुँह धोकर चाय पी लो।' मम्मी उसे जाग कर उठा हुआ देख कर कहती हैं।

'अभी पीते हैं' कहकर रीति चुपचाप रोटी अपनी मुट्ठी में छिपाने की कोशिश करती है। फिर जब देखती है कि मम्मी का ध्यान उसकी तरफ नहीं है, तो वह चुपचाप बरामदे से हो कर बाहर आ जाती है। पिंकी के लान में गन्नू बँधा हुआ है। रोज सवेरे रामू एक लंबी रस्सी का एक सिरा गन्नी के गले में बाँध देता है। फिर उसे घसीटता हुआ बाहर के बड़े मैदान में ले जाता है। वहाँ नीम के पेड़ से रस्सी का दूसरा सिरा बाँध देता है। दस गज की रस्सी में बँधी हुई गन्नी इधर-उधर

घूम-घूमकर घास खाती रहती है। गन्नू भी गन्नी के पीछे-पीछे भागता रहता है। लेकिन गन्नी को बाँधने के बाद रामू उसे पकड़ कर वापस लान में लाता है। लान में एक छोटा-सा खूँटा गाड़ा हुआ है। उसी में दो गज की पतली रस्सी में बँधा गन्नू कभी घास खाता है, कभी चुपचाप ताकता खड़ा या बैठा रहता है।

रीति देखती है कि गन्नू खूँटे के पास घास पर लेटा हुआ है।

'ग···न्नू।' खूब प्यार से वह पुकारती है।

गन्नू उसी तरह लेटा रहता है।

'गन्नू।' रीति फिर पुकारती है, 'बेटा गन्नू।'

गन्नू लेटा-लेटा कान उमकाता रहता है। कभी-कभी पूँछ फटकार कर मक्खियाँ भी उड़ाता है।

'क्या भूख लगी है तुम्हें गन्नू?' रीति पूछती है हाथ बढ़ा कर उसके माथे को सहलाने की कोशिश करती है। उसे डर लगा रहता है, कहीं मार न दे।

'रोटी खाओगे?' अब रीति पूछती है और उसके सामने हाथ बढ़ा कर मुट्ठी खोल देती है। पहले वह उसे हाथ से खिलाना चाहती है। लेकिन फिर डर के मारे रोटी वहीं घास पर डाल देती है। उसे डर लगता है कहीं गन्नू उसके हाथ को दाँतों से चबा न डाले। गन्नू घास पर गिरी रोटी को मुँह बढ़ा कर गप कर जाता है।

'अब सो जाओ बेटा।' वह फिर उसे 'पुच्' से पुचकारती है। एक बार धीरे से उसका माथा सहला कर फिर पूछती है, अभी और भूख लगी है?···अच्छा, थोड़ी देर में अभी तुमको डबल रोटी का एक टुकड़ा ला कर देंगे। खाओगे? मक्खन लगी हुई डबल रोटी लाएँगे। और···और, तुम्हे बिस्कुट भी देंगे। और टाफी भी···और···।'

'रीति।' तभी मम्मी की ऊँची आवाज़ सुनाई देती है, 'चलो, चाय पीओ।'

'आते हैं', कहती हुई रीति एक बार फिर गन्नू का माथा छू कर वापस आ जाती है।

पापा को जाने की देर हो रही है। उनका खाना मेज पर लगाया जा रहा है।

'हम भी पापा के साथ खाएँगे।' रीति मचलती है, हमेशा की तरह।

'नहीं बेटा' मम्मी आज उसे मना कर देती हैं, 'पापा को देर हो रही है। इन्हें खाना खाकर जाने दो, तुम बाद में खा लेना।'

'नहीं, हम अभी खाएँगे' 'रीति फिर मचल कर कहती है, 'पापा के साथ खाएँगे।'

'मान जाओ बेटा' पापा भी समझाते हैं, 'हमें जल्दी जाना है। तुम बाद में खाना।'

'नहीं हम अभी खाएँगे', वह मुनमुनाती है, 'तुम्हारे साथ खाएँगे।

'अच्छा लाओ इसके लिए भी ले आओ खाना।' पापा कहते हैं।

रीति संतुष्ट हो जाती है। ठुमकती हुई वह पापा के पास आ कर खड़ी हो जाती है। वह उसे उठा कर अपने बगल वाली कुरसी पर बैठा लेते हैं। खाना शुरू हो जाता है। वह देखने की कोशिश करती है कि उसका और पापा का खाना एक ही है, या उनकी थाली में कोई स्पेशल चीज है, जो उसे नहीं दी गई है। उसे विश्वास हो जाता है। सभी चीजें बराबर हैं। दाल, रोटी, चावल, तरकारी। सामने बड़ी प्लेट में सलाद कटा रखा है। टमाटर, प्याज, खीरा, मूली और भी शायद कुछ चीजें हैं। पापा खाना शुरू कर देते हैं। वह भी थाल में टटोल कर रोटी उठा लेती है। उसको टटोलती है, फिर अलग प्लेट में रख देती है, 'पापा, हम रोटी नहीं खाएँगे।'

'इस मरी को न खाना, न पीना है। यह बेकार परेशान कर रही है।' मम्मी कहती हैं, 'अभी कुछ ही देर हुई इसने दूध डबल रोटी खाई है। इसे भूख ही नहीं होगी। बस, आपने लाड़ पर चढ़ा रखा है, इसीलिए परेशान करती है। अभी मैं होऊँ तो एक तमाचा दूँ और यह ठीक हो जाय।'

रीति चौकन्नी हो कर सुनती है। देखें, पापा क्या कहते हैं।

'अच्छा ठीक है, खाने दो।' वह कहते हैं। फिर उसकी तरफ घूम कर पूछते हैं, 'अच्छा, रोटी नहीं खाओगी, तो क्या खाओगी?'

इससे पहले कि रीति कुछ बोले, 'मम्मी झुँझला कर कहती है, खाएगी क्या, मरी हमें खाएगी?'

'नहीं' रीति फौरन प्रतिवाद करती है, 'हम खाली दाल चावल खाएँगे।'

'अच्छा, सिर्फ दाल चावल खाओ।' पापा कहते हैं और रोटी की प्लेट उसके पास से हटा देते हैं।

रीति दाल चावल मिला कर धीरे-धीरे अपनी छोटी-छोटी उँगलियों से खाने लगती है।...अरहर की दाल है। और महीन चावल।...अरे, यह क्या ? एक बार जो एक ग्रास खा कर वह अपना हाथ फिर थाल पर लाती है, तो वह देखती है, एक गुलगुला-सा टुकड़ा पड़ा हुआ है। यह क्या है ? वह टटोल कर अनुमान लगाती है। लिजलिजा-सा। फिर वह उसे उठा कर मुँह में रख लेती है। यह केले का टुकड़ा था, जो पापा ने चुपके से उसकी थाली में डाल दिया था। उसके चेहरे पर फीकी मुस्कान आती है। उसे केले का स्वाद अच्छा लगता है। लेकिन वह कहती है, 'यह क्या करते हो ?'

पापा कुछ जवाब नहीं देते। चुपचाप वैसे ही खाते रहते हैं। दो तीन ग्रास खाने के बाद वह फिर अपनी उँगलियों से दाल चावल के बजाय किसी चीज का एक टुकड़ा उठाती है ? यह क्या है ? वह अंदाज लगाती है और उसे मुँह में डाल लेती है। अमरूद है। उसके स्वाद से वह समझ जाती है। फिर कहती है, 'यह क्या करते हो ? हमें दाल चावल खाने दो।'

पापा फिर कुछ नहीं कहते। वह समझ जाती है कि वह फिर कुछ न कुछ उसकी थाली में डाल देंगे। और फिर वह टोह लगाये रहती है। दो तीन ग्रास के बाद फिर अपनी थाली में कुछ पड़ा हुआ देखती है। एक गोल-गोल गुलगुला-सा। उसके मुँह पर एक मीठी हँसी दौड़ जाती है। यह क्या होगा ? वह गप से उठा कर उसे मुँह में डाल लेती है। रसगुल्ला। वाह, यह रसगुल्ला है। वह जीभ चाट-चाट कर खाने लगती है।

'अरे, आप खाएँगे जल्दी या इसी का दुलार करते रहेंगे ?' मम्मी पापा की थाली में रोटी डालती हुई कहती हैं, 'इसी के लिए तो यह मरी बैठती है, इनके पास खाने को।'

पापा कुछ नहीं बोलते। रीति चौकन्नी हो कर सुनती रहती है। उसे

यह भी भय होता है कि कहीं मम्मी उसे वहाँ से उठा न दें। लेकिन साथ ही उसकी उँगलियाँ अपनी थाली में कुछ और खाने की आशा करती रहती हैं और उसकी फीकी आँखें अपनी सूनी चमक के साथ पापा के चेहरे की ओर लगी रहती हैं।

८

आज रीति बहुत खुश है। भइया भी बड़ी देर से खूब उचक फाँद रहा है। मम्मी प्लास्टिक के झोलों में सामान ठीक करके रख रही हैं। पापा कपड़े पहने तैयार बैठे हैं और किसी आदमी से बात कर रहे हैं। जैसे ही वह आदमी जायगा, सब लोग बनारसी बाग चल देंगे।

'भइये।' रीति एक बार फिर से पूछती है,' बनारसी बाग क्या होता है?'

'बनारसी बाग।' भइया सहसा गम्भीर होकर उत्तरदायित्व के साथ जवाब देता है', एक बड़ा भारी बाग है, जिसका नाम बनारसी है।'

'बाग का नाम तो बनारसी है' रीति पूछती है', लेकिन उसमें है क्या?'

'बड़ा भारी बाग है', भइया समझाता है', जैसे लाल बाग, केसर बाग, चारबाग···।'

'तो उसमें खूब सारे फूलों के पेड़ लगे होंगे?' रीति पूछती है।

'हाँ, बहुत बड़ा बाग है बनारसी बाग' भइया जवाब देता है', उसमें खूब सारे पेड़ों में रंग-बिरंगे फूल लगे होंगे।'

'और अमरूद के पेड़ भी होंगे?' रीति को ध्यान आता है।

'हाँ', भइया भी याद करके बताता है', अमरूद के भी और केले, संतरे, सेब के भी।'

'और आम के?' रीति पूछती है।

'हाँ आम के भी' भइया बताता है', और अंगूर, शरीफे, अनार के

भी।'

रीति प्रत्येक फल के स्वाद का स्मरण करती है। केला, संतरा, सेब, आम, अंगूर, शरीफा, अनार...।

'लेकिन' रीति को भी फिर शंका होती है', जब वहाँ इतने सारे पेड़ हैं तो मम्मी किस लिए झोले में फल ले चल रही हैं ?'

'वहाँ तो फल के पेड़ हैं, वह खूब ऊँचे-ऊँचे हैं' भइया समझता है', वहाँ पर हम लोग फल तोड़ नहीं पाएँगे पेड़ पर से। इसी लिए मम्मी फल ले चल रही हैं।'

'तो उन फलों को लोग कैसे तोड़ते होंगे ?' रीति पूछती है।

'सीढ़ी लगा कर' भइया बताता है', पेड़ पर एक खूब लम्बी सीढ़ी चढ़ा कर आदमी चढ़ जाता है और अपने कंधे में लटके हुए झोले में फल तोड़ कर नीचे उतर आता है।'

'लेकिन पापा तो कहते हैं, वहाँ खूब सारे जानवर भी हैं' रीति फिर पूछती है', तो वह आदमी को मार नहीं डालते हैं ?"

'नहीं' भइया बताता है', सारे जानवरों को कटहरे में बंद करके रखा गया है। अगर उनको खोल दिया जाय, तो वह सब आदमियों को भी मार डालेंगे और पेड़ों में लगे हुए सारे फलों को भी खा जाएँगे। और...'

'चलो', तभी पापा बाहर वाले आदमी को विदा करके भीतर आते हैं, 'सब लोग तैयार हो गये।'

'हाँ' बैग किनारे रखते हुए मम्मी जवाब देती हैं।

रीति और भइया पापा का एक हाथ पकड़ कर चलने को तैयार हो जाते हैं।

घर से निकलते ही एक गधा सीपों-सीपों करता मिलता है।

'यह क्यों चिल्ला रहा है ?' रीति पूछती है।

'चिल्ला नहीं रहा है' भइया बताता है', रो रहा है।'

'रो रहा है ?' रीति पूछती है', रो क्यों रहा है ?'

'ऐं ?' भइया सोचता है और गधे की तरफ गौर से देखकर कहता है', इसके दो पैर बँधे हुए हैं।'

'पैर बँधे हैं ?' रीति पूछती है', फिर वह चलता कैसे है ?'

'बाकी दो पैरों से' भइया बताता है', इसके चार पैर होते हैं न ।'

'अच्छा', रीति पूछती है, 'बनारसी बाग में गधा भी होगा ?'

'चुप रहो', भइया सहसा उसे डाँट देता है, 'तुम बिल्कुल पागल हो ।'

रीति चुप हो जाती है । सोचने लगती है कि गधे के दो पैर क्यों बाँध दिये गये हैं । तभी पापा एक रिक्शे को बुला लेते हैं । सब लोग उस पर बैठ जाते हैं ।

'बताओ बनारसी बाग में सबसे पहले क्या देखोगे ?' पापा भइये से पूछते हैं ।

'शेर' भइया तपाक् से जवाब देता है ।

'अच्छा, तुम सबसे पहले क्या देखोगी ?' पापा रीति से पूछते हैं ।

'हम पहले रेलगाड़ी पर बैठेंगे ।' रीति थोड़ी दुविधा के बाद जवाब देती है। उसे किसी ने बताया था कि वहाँ एक छोटी-सी रेलगाड़ी भी है।

'अच्छा' पापा कहते हैं, 'पहले हम लोग रेलगाड़ी पर बैठेंगे, फिर बाग में घूमेंगे ।'

रीति खुश हो जाती है। सबसे पहले वह रेलगाड़ी में बैठकर घूमेगी, छोटी-सी रेलगाड़ी, छोटे-छोटे डब्बे, छोटा-सा इंजन···बाद में फिर वह देखेगी शेर, भालू, चीता···।

'पापा' इसी उत्साह में वह इस प्रश्न को भी पूछ लेती है, जो बड़ी देर से उसके मन में कुलबुला रहा है, 'उस गधे के दो पैर क्यों बाँध दिये गये थे ?'

'जिससे वह भाग न जाय' पापा हँसते हुए जवाब देते हैं ।

गोमती नदी वाला नया पुल अब पीछे छूट गया है । रिक्शा तेज़ी से ढाल पर लुढक रहा है। इस तरह से जब रिक्शा सन्नाटे के साथ चलता है, तब हवा के तेज़ झोंके लगते हैं । रीति को बड़ा मज़ा आता है । सनसना-हट के साथ हवा कानों में गूँज़ती है। उस वक्त वह आँखें बंद कर लेती है । उसके रिबन में बँधे हुए बाल उड़ कर चारों तरफ बिखरने लगते हैं ।

'अभी कितनी दूर और है बनारसी बाग ।' वह पापा से पूछती है ।

'बस थोड़ी ही दूर और है' पापा जवाब देते हैं ।

'मम्मी पानी भी लाई हो कि वहाँ पर भरोगी प्लास्टिक की बोतल में ?' वह मम्मी से पूछती है।

'हाँ, हाँ लाए हैं। मम्मी जवाब देती हैं और बैग को ठीक से पकड़ लेती हैं।

बसों, मोटरों, रिक्शों और साइकिलों से भरी हुई भीड़-भाड़ वाली सड़क को छोड़ कर अब रीति का रिक्शा बायीं तरफ की सुनसान-सी लगने वाली सड़क पर मुड़ जाता है। और थोड़ा ही रास्ता पार करने के बाद एक संकरी सड़क शुरू हो जाती है, जिसके एक तरफ बड़ी दीवार और दूसरी तरफ ऊँचे-ऊँचे मकान हैं। अचानक ही रिक्शा रुक जाता है।

'क्या बनारसी बाग आ गया ? रीति चौंक कर पूछती है।

'हाँ, बेबी' रिक्शेवाला जवाब देता है, 'बनारसी बाग आ गया।'

रीति चौंकती है। इधर-उधर देखने समझने की कोशिश करती है। यहाँ तो कोई बाग नहीं है। दाहिनी तरफ एक सड़क मुड़ गई है, जिस पर मोटर, ताँगे, रिक्शे खड़े हैं और बायीं तरफ एक बड़ा भारी जालीदार फाटक है।

'आओ टिकट ले लें।' पापा रीति का हाथ पकड़े फाटक के बायीं तरफ दीवार में बनी हुई एक छोटी-सी खिड़की की तरफ बढ़ जाते हैं।

'यहाँ भी टिकट लेना पड़ता है।' रीति पूछती है।

'हाँ।' भइया बगल में आकर जवाब देता है।

'जैसे टिकट रेलगाड़ी में होते हैं ?' रीति पूछती है।

'हाँ।' भइया जवाब देता है।

टिकट दरवाजे पर दिखा कर सब लोग अन्दर आते हैं। भीतर पहुँचते ही भइया एकदम से मम्मी से हाथ छुड़ा कर सामने लगी जाली की तरफ भागता है, और चीखता हुआ कहता है, 'यह देखो रीति नील गाय।'

'नील गाय ?' रीति पूछती है।

'हाँ, नील गाय।' वह रीति का हाथ पकड़ता हुआ उसे सींखचों की ओर घसीटता है। 'यह देखो नील गाय और यह नील गाय का बच्चा।' ...आओ छू कर देखो।'

रीति कौतूहलपूर्वक आगे बढ़ती है। उसकी आँखें सामने भटकने

लगती हैं। वह देखती है, लोहे के सींखचों की एक बड़ी भारी दीवार है। उसके उस पार एक बड़ा-सा काला धब्बा, एक काला ढेर-सा खड़ा हुआ है।

'ले, ले, आ···आ।' भइया अपने हाथ में थोड़ी-सी घास तोड़कर उसकी तरफ बढ़ाता है। नील गाय धीरे-धीरे नजदीक आती है और अपना मुँह सींखचों में डाल कर खाने लगती है। रीति ताज्जुब से उसे देखती है। फिर धीरे-धीरे हाथ बढ़ा कर उसे छूती है। इसके थन उसे ठंडे-ठंडे से लगते हैं। वह फिर उसका माथा सहलाती है। वाह, यह कैसा जानवर है। वह सोचती है, नील गाय···नील गाय।'

'यह देखो, नील गाय का बच्चा।' भइया फिर एक तरफ लपकता है। रीति भी पापा का हाथ पकड़ कर उधर ही चलती है। एक छोटा-सा बछड़ा उछलता-कूदता आता है, जैसे बकरी का बच्चा हो। बाहर की तरफ एक लड़का दूध की एक बोतल में रबड़ का निपुल लगाये हुए आता है। उसे देख कर बछड़ा खूब उछल-फाँद करता है। वह लड़का सींखचों के दरवाजे पर लगा ताला खोलता है और दरवाज़े को थोड़ा-सा ठेल कर बछड़े के निकलने लायक जगह बना देता है। बछड़ा एक छलांग में बाहर आ जाता है और उस लड़के से लिपटने-चिपटने लगता है। लड़का उसे पुचकारता हुआ दूध की बोतल उसके मुँह में लगा देता है। बछड़ा चुलबुलाता हुआ दूध पीने लगता है।···रीति पास आकर पहले बछड़े को टटोलती है, फिर दूध की बोतल छूती है। शीशे के भीतर से छलकता हुआ सफेद-सफेद दूध देखती है और बछड़े की उछल-फाँद देखकर खुश होती है।

'यह घास नहीं खाता है?' वह उत्सुकता से पूछती है।

'नहीं, यह दूध पीता है' वह लड़का बताता है, 'घास उसकी माँ खाती है।'

इसकी माँ घास खाती है, यह दूध पीता है···रीति सोचती है।··· तभी छुक्-छुक्-छुक्-छुक् की आवाज़ आती है और एक खड़खड़ाहट भरा शोर बढ़ जाता है।

'आओ, रेलगाड़ी आ गई है' पापा रीति का हाथ पकड़ कर दूसरी तरफ बढ़ते हुए कहते हैं, 'पहले एक चक्कर रेलगाड़ी पर लगा लें, फिर

ग्रौर जानवर देखेंगे।'

रेलगाड़ी ग्रा गई है।...रीति सोचती है।...रेलगाड़ी ग्रा गई है... कहाँ है रेलगाड़ी। उसे सामने एक सन्नाटे भरा सूनापन दिखाई देता है, ग्रौर ग्रागे लगता है कि एक टीन का डिब्बा नुमा कमरा बना है। वहाँ पर भी एक छोटी-सी खिड़की बनी है।

'दो बड़े, दो छोटे टिकट।' पापा एक नोट निकाल कर खिड़की के भीतर बढ़ा देते हैं।

टिकट...रीति सोचती है। दो बड़े टिकट मम्मी ग्रौर पापा के लिए ग्रौर दो छोटे टिकट रीति ग्रौर भइये के लिए।...तो फिर यहाँ पर भी टिकट लेने पड़ते हैं। टिकट...जसे ग्रभी बनारसी बाग के बाहर लिए थे ग्रौर जैसे रेलगाड़ी में लिए जाते हैं, जब वह नानी के यहाँ जाती है।

टिकट लेकर पापा कहते हैं, 'ग्राग्रो रीति, ग्रब स्टेशन पर ग्राग्रो।'

स्टेशन? यहाँ स्टेशन कहाँ?...वह पापा का हाथ पकड़े हुए धीरे-धीरे दाहिनी ग्रोर खिसकती है। छोटा-सा सींखचे का एक फाटक है, उसके बाद दो सीढ़ियाँ। ऊपर एक चबूतरा बना है। उसी पर थोड़े से ग्रादमी खड़े हैं। सामने छोटी-सी रेलगाड़ी खड़ी है। एक मुन्ना-सा इंजन ग्रौर उसके पीछे जुड़े हुए दो डिब्बे।

'हम इंजन के पास वाले डिब्बे में बैठेंगे।' भइया ग्रागे लपकता हुग्रा कहता है।

'अच्छा' पापा कहते हैं ग्रौर सब लोग ग्रागे वाले डिब्बे में ही बैठ जाते हैं। इधर-उधर ग्रौर लोग भी बैठे हैं। लाल फ्राक पहने एक छोटी लड़की बार-बार ग्रपनी सीट से उतर कर नीचे ग्रा जाती है ग्रौर फिर उचक कर बैठ जाती है।

'बस! ग्रब सिर्फ दो टिकट ग्रौर देना।' रेलगाड़ी का कंडक्टर टिकट देने वाले ग्रादमी से कहता है, 'दो ग्रादमी से ज्यादा की जगह नहीं है।'

रीति इधर-उधर झाँकती है। रेलगाड़ी में से क्या दिखाई देता है? भइया क्या देखने को कह रहा है। लाल फ्राक वाली लड़की एक बार फिर नीचे कूद कर ऊपर चढ़ जाती है।

'ग्रच्छा साहब' कण्डक्टर सीटी बजाते हुए कहता है, 'ग्रब ग्राप लोग

ठीक से बैठ जाइए।···बेबी, तुम भी बैठ जाओ।'

सर्र···र···सर्रर···र···की आवाज होती है और छुक्-छुक्-छुक्-छुक् करती हुई रेलगाड़ी खिसकने लगती है। चाल बढ़ते-बढ़ते वह इतनी ज्यादा हिलने-डुलने लगती है, जैसे इक्का चल रहा हो।

'वो देखो गेंडा' भइया बाहर झाँकता हुआ चिल्ला है और बाहर की तरफ झुक जाता है। मम्मी उसे सम्हाल कर पकड़े रहती हैं। रीति उसी दिशा में ताकने लगती है लेकिन उसे कुछ नहीं दिखाई देता। बस रेलगाड़ी के चलने के साथ ही साथ अंधियारा उजियारा बारी-बारी से जैसे झांई मारता जाता है।

'पापा, हमें गैंडा दिखा दो।' वह कहती है।

'अभी चुपचाप बैठी रहो' पापा समझा कर कहते हैं, 'बाद मेंरेलगाड़ी से उतर कर सब दिखा देंगे।'

'वो देखो शेर!' भइया फिर बाहर लटकता हुआ चिल्लाता है, बबर शेर।'

'सीधे बैठो।' मम्मी उसे पकड़ती हुई कहती हैं, 'बहुत लटकोगे तो गिर पड़ोगे नीचे।'

भइया चीखना बंद कर देता है, लेकिन तब भी लटका ही रहता है और मम्मी उसे वैसे ही पकड़े रहती है।

छुक्-छुक् करती हुई गाड़ी वैसे ही बढ़ती रहती है। उसके हिलने-डुलने में भी एक सुख रहता है।···कहीं यह लुढक न जाय।···रीति सोचती है। फिर तो सब लोग गिर पड़ेंगे। भइया भी, मम्मी और पापा भी। और···यह लाल फ्राक वाली लड़की भी। रीति का मन होता है, वह उसे छूकर देखे! वह अपना हाथ बढ़ाती भी है, लेकिन वह लड़की फुदक कर दूर चली जाती है।

'भालू', 'हाथी', 'हिरन', 'शुतुर्मुर्ग' भइया जगह-जगह पर सूचना देता रहता है और गाड़ी आगे बढ़ती रहती है। फिर वह एकाएक धीमी होने लगती है और एक अँधेरे गुफानुमे में हो कर फिर 'स्टेशन' पर आकर खड़ी हो जाती है। सारे यात्री धीरे-धीरे उतर आते हैं। रीति गुफानुमे डिब्बे की तरफ इशारा करके पूछती है 'यह क्या बना है?'

'यह रेलगाड़ी का घर है।' किसी के बोलने से पहले भइया बताता

है, 'रात को रेलगाड़ी इसी में खड़ी करके फाटक बंद कर दिया जाता है और उसमें ताला लगा दिया जाता है।'

रीति को सोचने के लिए काफी सामान मिल जाता है। रोज रात को जब सब लोग चले जाते होंगे, तब रेलगाड़ी इस मकान के भीतर खड़ी कर दी जाती होगी। फिर···

'आओ, इधर से ही देखना शुरू करें।' पापा फिर नील गाय वाले जंगले की तरफ बढ़ चलते हैं।

'क्या नील गाय अभी खड़ी है?' रीति पूछती है।

'हाँ', भइया जवाब देता है', अब उसका बच्चा फिर उसके पास आ गया है।'

सब लोग एक दूसरे सीखचों से ढ़के बाड़े के पास जा कर खड़े हो जाते हैं।

'इसमें क्या है?' रीति पूछती है।

'बारह सिंगा' पापा बताते हैं।

'बारह सिंगा?' रीति चौंकती है। यह कौन-सा जानवर होता है। बारह सिंगा।

'इसके बारह सींग होते हैं।' भइया बताता है।

बाप रे बाप। रीति चौंकती है। गाय के दो सींग होते हैं। इसके बारह सींग होते हैं। बारह सिंगा।

'यह देखो' भइया जंगले के निकट पहुँच कर थोड़ी सी घास मुट्ठी में लेकर पुकारने लगता है, 'आओ, आओ, ले, ले, घास खा ले।'

'हम भी छूकर देखेंगे' रीति कहती है। और पापा उसका हाथ भीतर बढ़ा कर सींग में लगा देते हैं। रीति टटोल कर देखती है, यह तो पत्थर की तरह है। यह इसका सींग है, इससे यह दूसरों को मार डालता है। बारह सिंगा···

'हिरन, हिरन, रीति, हिरन।' भइया फुदकता हुआ आगे जा पहुँचता है और ताली बजाने लगता है। रीति भी पापा का हाथ खींचती हुई उसी तरफ बढ़ चलती है। हिरन की रूप रेखा उसकी समझ में नहीं आती। उसे ऐसा लगता है, जैसे छोटे-छोटे बकरी के बच्चे हों।

'यह तो बकरी के बच्चे की तरह है' रीति पापा से कहती है।

'हाँ।' वह जवाब देते हैं।

'इसे छूकर देखें ?' रीति पूछती है, 'काटेगा तो नहीं ?'

'नहीं काटेगा।' पापा कहते हैं। वह रीति का हाथ पकड़ कर हिरन की तरफ बढ़ा देते हैं।

'वो देखो। 'भइया अगले बाड़े पर से चिल्लाता है, 'खरगोश, खरगोश। खूब सारे खरगोश।'

'खरगोश।' रीति चौंक पड़ती है। वैसे ही खरगोश जैसे बड़ी मौसी के यहाँ पले हुए हैं। यहाँ भी खरगोश हैं। बनारसी बाग में खरगोश वह पापा को आगे घसीट लेती है। भइये के लाख बुलाने पर भी कोई खरगोश पास नहीं आता। सब दूर ही दूर फुदकते रहते हैं। रीति आँखों पर जोर देकर ताकती है। खरगोशों की आकृति स्पष्ट नहीं दिखाई देती। कुछ-कुछ ऐसा लगता है, जैसे रुई की छोटी-छोटी पुटलियाँ हों, छोटे-छोटे बण्डल, फुटबाल की तरह लुढ़क रहे हों।

'जल्दी आओ रीति, जल्दी आओ।' भइया और आगे बढ़ कर आवाज़ लगाता है, 'देखो हाथी।'

'हाथी !' रीति चौकन्नी हो जाती है। 'जल्दी चलो, पापा, उधर, हाथी की तरफ।'

बड़ा भारी पहाड़ की तरह काला-काला हाथी, एक हिलती-डुलती चट्टान। रीति सहमी खड़ी रहती है।

'ले ले।' भइया थोड़ी-सी घास तोड़ कर थोड़े फासले से हाथ उठाता है। हाथी अपनी सूँड़ बढ़ा कर घास ले लेता है। भइया ताली बजाने लगता है, 'हमने हाथी को घास खिलाई।'

'यह आदमी को काटता नहीं है ?' रीति पूछती है।

'नहीं !' भइया जवाब देता है। फिर कुछ देख कर कहता है, 'इसके पैर में मोटी-सी लोहे की जंज़ीर बँधी है।'

'पापा हमें हाथी पर बैठा दो। 'भइया जिद करने लगता है।

'क्यों भाई ?' पापा हाथी के रखवाले से पूछते है, 'आज हाथी की सवारी नहीं कराई जा रही है ?'

'क्यों नहीं साहब ?' वह जवाब देता है, उधर सामने चले जाइए। अभी आता होगा दूसरा हाथी। इस हाथी का महावत आज नहीं आया

है।'

'पापा, हम भी घास खिलाएंगे इसे। रीति ज़िद करती है, लेकिन डर के मारे आगे नहीं बढ़ती।

'खिला दो बिटिया।' हाथी का रखवाला उसका उत्साह बढ़ाता है। वह थोड़ी-सी घास हाथ में ले कर सामने हथेली फैला देती है। हाथी की सूँड़ उस पर से घास उठा लेती है। रीति अपना हाथ पीछे खींच लेती है, लेकिन उसे मजा आ जाता है। वाह, उसने भी हाथी को घास खिलाई है।

'चलो गज्जू।' तभी हाथी का रखवाला हाथी को संबोधित करता हुआ कहता है, 'बिटिया जी को सलाम करो।'

और उसके कहने के साथ ही हाथी अपनी सूँड़ उठाकर रीति को सलाम करता है।...पापा रीति के हाथ पर एक सिक्का रख कर कहते हैं, 'लो, यह इस आदमी को दे दो।'

रीति उस आदमी को वह सिक्का दे देती है। वह भी रीति को सलाम करता है। वह पूछती है, 'इस हाथी का नाम गज्जू है।'

"हाँ, बिटिया' वह बताता है और रीति का दिया हुआ सिक्का अपने कान में खोंस लेता है।

वाह! क्या मज़ेदार बात है। रीति सोचती है, इस हाथी का नाम गज्जू है। जैसे ही इस आदमी ने कहा, 'गज्जू, बिटिया को सलाम करो।' बस, वैसे ही उसने अपनी सूँड़ उठा कर रीति को सलाम किया। वाह, कैसा बढ़िया जानवर है हाथी, और कैसा बढ़िया नाम है, गज्जू।

'टन्...ट...न...न...न, टन...ट...न...न...न...न!' तभी घंटी की आवाज़ सुनाई देती है।

'सवारी वाला हाथी आ गया।...सवारी वाला हाथी आ गया।' तभी भइया फिर कहता है, 'अब चलो, पापा, हाथी पर सवारी करा दो।'

'रीति! हाथी पर बैठोगी?' पापा पूछते हैं।

'हाँ, हाँ।' रीति सहम कर कहती है, 'लेकिन गिरा तो नहीं देगा?'

'नहीं, नहीं, बिटिया रानी, वाह गिरायेगा कैसे?' हाथी का रखवाला कहता है, 'जाइए, आराम से बैठिए।...उधर चले जाइए, उस

सीढ़ी पर से चढ़कर उस चबूतरे पर। वहीं आकर हाथी लगेगा।'

रीति पापा के साथ उसी तरफ बढ़ती है। भइया पहले ही दौड़ कर वहीं पहुंच चुका है। एक, दो तीन, चार, पाँच, छः सात, आठ, नौ··· रीति गिनती है। कुल दस सीढ़ियाँ हैं। दोनों तरफ ऊँची रेलिंग बनी है और ऊपर एक छोटी-एक छोटी-सी कोठरी की छत की तरह का चबूतरा बना है।

'टन्···ट···न···न···, टन्···ट···न···न··न···' करता हुआ हाथी आता है और चबूतरे से सट कर खड़ा हो जाता है। उस पर बैठे हुए लोग उतर जाते हैं। तीन छोटे लड़के-लड़कियाँ हैं और एक बड़ा आदमी।

'आइए, आप लोग आ जाइए।' हाथी वाला कहता है, 'बड़ों के पचास पैसे बच्चों के पच्चीस पैसे।'

पापा एक नोट और कुछ पैरे उसके हाथ पर रख देते हैं।

'आइए', वह हाथी को पुचकारता हुआ चबूतरे से फिर सटा देता है, 'आ जाइए, सम्हाल कर।'

पहले पापा जाकर बैठ जाते हैं, फिर बारी-बारी से हाथ पकड़ कर वह रीति, भइये और मम्मी को बैठा लेते हैं। हाथी चल पड़ता है। घंटी टनटनाने लगती है। रीति को अजीब-सा लगता है। ऐसा लगता है जैसे कोई तख्त या चौकी हिलती-डुलती हुई चल रही हो, कभी इधर कभी उधर, कभी इस तरफ कभी उस तरफ, ढुलमुल, ढुलमुल···वाह रीति हाथी पर बैठी है और हाथी चल रहा है। ···इसी तरह से राजा रानी हाथी पर बैठते हैं और हाथी चलता है।

'हाय मम्मी!' भइया तभी चीख कर बताता है, 'वह देखो कितना बड़ा बन्दर है भालू की तरह।'

रीति सहसा सहम-सी उठती है। बंदर, बंदर तो बंदर ही होता है। वही बंदर जिसका नाच सड़कों पर होता है, वह भालू की तरह कैसे हो सकता है। भालू तो बहुत बड़ा होता है, शेर की तरह, एक बार उसने भी भालू का नाच देखा था। ···लेकिन भालू की तरह बंदर कैसे हो सकता है।

'वाह, वाह, कैसे मज़े में सो रहे हैं लाट साहब!' भइया फिर पुल-

कित स्वर में कहता है, 'देखो, वो देखो, कैसे मज़े में सो रहे हैं, जनाब चीता साहब। छत पर लेटे हुए धूप खा रहे हैं।'

रीति फिर चौंकती है। चीता! जो शेर की तरह होता है। भइया कहता है, बड़े मज़े में सो रहा है। छत पर लेटा हुआ धूप खा रहा है। धूप खा रहा है? धूप कैसे खाई जाती है? प्लेट में रख कर चम्मच से? और उसके पास छत कहाँ से आई। क्या इस जंगले के अंदर उसका कोई कमरा भी बना है।...वह उधर देखने की कोशिश करती है। क्या है उधर?...लेकिन उसे कुछ नहीं दिखाई पड़ता। बस चारों तरफ फैली हुई धूप उसकी आँखों को चौंधियाती रहती है और बड़े-बड़े ऊंचे पेड़ काले-काले पहाड़ों जैसे अँधियारे के झुंड मालूम होते हैं।

...हाथी चलते-चलते एक स्थान पर रुक जाता है।

'रुक जाओ छन्नू!' हाथी वाला कहता है, 'रुक जाओ छन्नू! हाँ, शाबाश।'

'वो देखो, रेलगाड़ी आ रही है।' भइया हाथ उठाकर चिल्लाता है और छुक् छुक् छुक् छुक् की धीमी आवाज़ तेज़ होने लगती है। रीति देखती है एक गोले में चक्कर लगाती हुई रेलगाड़ी छुक् छुक् छुक् छुक् करती हुई उसके सामने से निकल जाती है। वही रेलगाड़ी जिस पर अभी थोड़ी देर पहले रीति बैठ चुकी थी।

'चलो छन्नू!' हाथी वाला फिर कहता है, 'चल बेटा, हाँ, शाबाश।'

छन्नू! रीति सोचती है। इस हाथी का नाम छन्नू है। उस हाथी का नाम गज्जू था। क्या ये दोनों भाई-भाई हैं? और फिर हाथी वाले ने उसे 'बेटा' कहा था। यह क्यों? क्या छन्नू हाथी वाले का बेटा है। अगर यह बेटा है तो गज्जू भी इसका बेटा होगा। और गज्जू के पास जो हाथी था, वह इस हाथी वाले का भाई होगा।

'वो देखो।' भइया फिर कहता है, 'कितनी सारी चिड़ियाँ। हाय! चिड़ियाँ, सारस, हंस, बत्तख, बगुले और मोर। अरे वो देखो, वो मोर अपने पंख फैलाए खड़ा है।...नाच रहा है।'

रीति सोचती है कि मोर कैसे नाच रहा होगा। उसकी कल्पना में एक तस्वीर बनने लगती है। मोर नाच रहा है और तमाम चिड़ियाँ, बत्तखें, बगुले, चारों तरफ भीड़ लगाये हुए उसका नाच देख रहे हैं।

जैसे उस दिन बंदर नाच रहा था और रीति के साथ दर्जनों बच्चे चारों तरफ भीड़ लगाये हुए उसका नाच देख रहे थे।

'अरे गजब !' भइया फिर हैरत से कहता है, 'कितना बड़ा तोता है। हाय इसकी पूँछ देखो कितनी लम्बी है। और चोंच। अरे गजब। यह तोता है कि मुर्गा !'

रीति फिर चौकन्नी होती है। तोता तो बहुत छोटा-सा होता है। लोहे के एक छोटे-पिंजड़े में रहता है। पिंजड़े के भीतर कोई चीज बढ़ा दो तो लपक कर ले लेता है और अगर उँगली भीतर डाल दो, तो टोंट मार देता है। कभी अगर उसकी पूँछ पिंजड़े से बाहर निकल आए और उसे पकड़ कर खींचो, तो 'टें टें टें टें' की आवाज़ करता है। बड़ा मज़ा आता है। वही तोता मुर्गे के बराबर कैसे हो सकता है। मुर्गा तो 'गुटरू गूँ, गुटरू गूँ' बोलता है। 'टें टें टें टें 'बोलने वाला और 'गुटरू गूँ, गुटरू गूँ' बोलने वाले बराबर कैसे हो सकते हैं।

'ह्वा हू, ह्वा हू, ह्वा हू, ह्वा हू' एक बड़े ज़ोर की कर्कश आवाज़ आसमान में एक तेज़ चीत्कार की तरह गूँजती है।

'यह कौन बोल रहा है ?' रीति जैसे सहमी हुई सी पूछती है।

'एक काला-काला बन्दर है' भइया गौर से उधर देखता हुआ जवाब देता है, 'उसके खूब लम्बे-लम्बे हाथ-पैर हैं। वही चिल्ला रहा है। अभी चल कर देखेंगे।···पापा इस बन्दर के पास अभी ज़रूर चलना।'

हाथी चलता रहता है। उसी तरह से इधर-उधर फुदकता, लुढकता, ढुलमुल-ढुलमुल करता। अगले मोड़ पर वह दाहिने मुड़कर नीलगाय वाली सड़क पर आ जाता है। फिर हिरन, खरगोश और फिर वही गज्जू। अपने भाई गज्जू के पास। 'टन् ट···न···न···न' घंटी बजाता हुआ। और आखीर में फिर उसी चबूतरे के पास।

···धीरे-धीरे सब लोग उतरते हैं पहले पापा सम्हल कर उतर जाते हैं। बाद में हर-एक उनका हाथ पकड़ कर सम्हल-सम्हल कर उतरता है। रीति के मुख पर एक सन्तोष भरी मुस्कान आ जाती है।···वह हाथी पर बैठी थी। हाँ, घर जाकर वह सबको बतायगी। वह हाथी पर बैठी थी, जैसे राजा लोग बैठते हैं।

'पापा, पैसे दे दो।' तभी भइया पापा का हाथ पकड़ कर झूलता

हुआ कहता है, 'मूँगफली ला कर भालू को खिलायेंगे।'

'मूँगफली लाकर भालू को खिलायेंगे?' रीति चौंकती है। भइया मूँगफली ला कर भालू को खिलायगा। भालू क्या मूँगफली खाता है? भालू? वही भालू, जिसका नाच रीति ने देखा था।

'लो चार आने की ले आओ।' पापा एक चवन्नी निकाल कर भइये के हाथ पर रख देते हैं। वह भागता हुआ चला जाता है। पास में ही शायद एक बड़े पेड़ के नीचे एक मूँगफली वाला बैठा है। रीति कल्पना करती है, एक बड़े झउवे में खूब सारी मूँगफलियों का ढेर लगा हुआ है। भइया उसी से चार आने की मूँगफली ले कर वापस आ जाता है।

'ले, ले, ए...ए...ए.. ले!' भालू वाले कटहरे के सामने तमाम लोग निशाने लगा कर मूँगफली फेंक रहे हैं। भालू मुँह खोलकर मूँगफली रोक लेता है और फिर अपने मुँह से चबा कर उसे खा जाता है।

'ले, ले, ए...ए...ए...ले।' भइया भी एक मूँगफली फेंकता है। फिर ताली बजा कर हँसता है। 'ले ली, लेली, भालू ने मूँगफली अपने मुँह में रोक ली।'

रीति को बड़ा अजीब लगता है। वह अंदाज लगाती है, जिस तरह से मूँगफली को निशाना मार कर फेंका जाये और कैसे वह भालू के बाये हुए मुँह में जा कर गिरे।'

'पापा, हम भी भालू को मूँगफली खिलायेंगे।' वह भी जिद करती है।

'तुम कैसे खिला पाओगी?' भइया विरोध करता है, 'तुमसे मूँग-फली नाली में गिर जायगी।'

'नहीं, हम खिलाएँगे।' वह फिर जिद करती है।

पापा उसके हाथ में एक मूँगफली पकड़ा देते हैं।

'ले...ले...ए.. ए...ए...ले!' कह कर वह बड़े चाव से मूँगफली फेंकती है और फिर धड़कते हुए दिल से इसका नतीजा सुनने को तैयार हो जाती है।

'देखा न?' भइया उसे लानत भेजता है, 'हम कह रहे थे न कि मूँगफली नाली में गिर जायगी।'

रीति का मुँह उतर जाता है।

'नहीं, नहीं।' तभी पापा उसके हाथ में एक दूसरी मूँगफली पकड़ाते हुए कहते हैं, 'देखना, अब की बार रीति फेंकेगी और भालू के मुँह में गिरेगी।'

रीति कौतूहल से हाथ में मूँगफली पकड़ लेती है। पापा उसका हाथ पकड़ कर मूँगफली को झटके के साथ फिकवाते हैं। रीति का कलेजा फिर धड़कने लगता है।

'देखा!' पापा हँसते हुए कहते हैं, 'अबकी मूँगफली भालू के मुँह में गिरी है। देखो, वह खा रहा है।'

'हमने भालू को मूँगफली खिलाई।' रीति भी ताली पीटती हुई हँसने लगती है, 'हमने भालू को मूंगफली खिलाई।'

रीति का हृदय प्रसन्नता से भर उठता है। उसने भालू को मूँगफली खिलाई, दूर से फेंक कर मूँगफली खिलाई और भालू ने उसे काटा नहीं। अगर पास से खिलाती तो हाथ में काट लेता। एक बार उसने तोते को मिर्चें खिलाई थीं, तो उसने रीति की उँगली में काट लिया था।···

···तब तक भइया अगले जंगले तक पहुँच जाता है। उसमें भी भालू ही है। ···अरे, वैसा ही काल-काला भालू, झबरे कुत्ते की तरह। और उसके अगले जंगले में भी भालू ही है। ···रीति को आश्चर्य होता है। अरे, इसमें भी भालू। और···और···क्या अगले वाले जंगले में भी भालू ही है? हाँ, उसमें भी भालू ही है। ···अरे, इस पूरी लाइन में तो भालू ही भालू हैं। इतने सारे भालू।

'बनमानुस।' भइया अगले जंगले पर लिखे हुए नाम को पढ़ कर बताता है, 'बनमानुस। ···यह बिलकुल आदमियों की तरह होता है। यह अपना सारा काम आदमियों की तरह ही करता है। ···कितना बड़ा बन्दर है, बिलकुल आदमी के बराबर।'

रीति अपनी सूनी आँखों से सामने वाले जंगले को निहारती रहती है। बनमानुस कैसा होता है। बंदर की तरह। फिर वह आदमी की तरह कैसे हो सकता है? बन्दर का नाच उसने देखा था एक बार। छोटे-छोटे बंदर बंदरियाँ नाच रहे थे। आदमी की तरह बंदर की शादी बंदरिया से हुई थी। वह उसे ससुराल से विदा करा कर ला रहा था। यह तो ठीक है कि वह आदमियों की तरह सब काम करता है, लेकिन बन्दर आदमी

के बराबर लम्बा-चौड़ा बनमानुस कैसे हो सकता है !

'लकड़बग्घा ।' भइया चीख कर बताता है, 'लकड़बग्घा ।'

रीति सहम जाती है । लकड़बग्घा । वही लकड़बग्घा, जो छोटे-छोटे बच्चों को उठा ले जाता है । दइया रे दइया । लकड़बग्घा कैसा होगा लकड़बग्घा । भालू की तरह, शेर की तरह, चीते की तरह, हाथी की तरह या बनमानुस की तरह ।

'भइये किस तरह का है लकड़बग्घा ?' वह पूछती है ।

'कुत्ते की तरह है ।' जवाब मिलता है ।

कुत्ते की तरह ! रीति चौंकती है । तो लकड़बग्घा, न तो भालू की तरह है, न शेर की तरह, न चीते की तरह, न हाथी की तरह और न बनमानुस की तरह । बल्कि वह कुत्ते की तरह है । जैसे कुत्ते होते हैं, वैसे ही यह लकड़बग्घा है । यह कैसे उठा ले जाता है बच्चों को । क्या मुँह में दबा कर ? जैसे चूहे को बिल्ली उठा ले जाती है ।...

'भेड़िया !' अगले जंगले के सामने भइया बताता है ।

हाय दइया ! कितना डरावना नाम है, भेड़िया ! भेड़िया कैसा होता होगा ?

'यह भी लकड़बग्घे की तरह है ।' भइया बताता है ।

रीति चौंकती है । भेड़िया भी लकड़बग्घे की तरह है । यानी कुत्ते की तरह । तो भेड़िया और लकड़बग्घा दोनों ही कुत्ते की तरह होते हैं ।

'जल्दी-जल्दी चलो ।' मम्मी कहती हैं, 'जल्दी आगे बढ़ो ।'

सब लोग आगे बढ़ने लगते हैं । भेड़िये वाला जंगला आखिरी है अपनी लाइन में । इसके बाद एक संकरी-सी गली मुड़ जाती है दाहिने हाथ की तरफ । फिर दो कोठरियाँ हैं ।

'लिहे, लिहे, लिहे, लिहे ।' कुछ लोग वहाँ खड़े हुए जानवरों की आवाज सुनने के लिए जानवरों की तरह ही आवाज निकाल रहे हैं ।

'चलो, यहाँ कोई नहीं है' एक आवाज़ आती है, 'चीता तो बाहर धूप खा रहा है ।'

जंगले से लगे-लगे सब लोग चक्कर लगाते हुए आगे घूमते हुए निकल जाते हैं । जैसे परिक्रमा कर रहे हों । थोड़े फासले के बाद वही जगह आ जाती है, जहाँ से देख कर भइये ने बताया था कि चीता अपने

कमरे की छत पर आराम से पड़ा सो रहा है। रीति कोशिश करने पर भी कुछ देख नहीं पाती। बस, वही धूप की चकाचौंध और छाँह का अँधियारा।

'पापा, इस तालाब में क्या है ?' भइया एक जगह पर जमा भीड़ को देखकर पूछता है।

'ऊदबिलाव ! वह जवाब देते हैं और सब लोग तालाब को घेर कर खड़े हो जाते हैं।

'वो है, वो है।' भइया उँगली से इशारा करता हुआ बताता है, 'वो निकला, वो डुबकी मारी, वो गायब हो गया।'

वाह, इतने कमाल एक साथ कर सकता है, ऊदबिलाव ! रीति सामने ताकती है, लेकिन कुछ नहीं देख पाती। बस हल्की-हल्की गुडप-गुडप, गुडप पानी की आवाज उसके काम में पड़ती रहती है।

'यह लो भइया जी, एक मछली खरीदकर इस तालाब में चाहे जहाँ पर फेंक दो, यह जानवर ढूँढ़ कर निकाल लायेगा और फिर सामने इस चबूतरे पर बैठकर खायेगा।' एक आदमी छोटी-सी डलिया में कुछ मछलियाँ लिए कहता है।

'पापा, हमें एक मछली दिलवा दो।' भइया जिद करता है।

'हम भी एक मछली लेंगे।' रीति भी भइये को देख कर जिद करती है।

'बस, एक मछली दे दो।' पापा मछली वाले से कहते हैं। वह एक मछली दे देता है। पापा, उसे रीति को दिखाते हैं। वह पास से आँख लगा कर उसे देखने की कोशिश करती है। फिर पापा उसे समझाते हैं, 'देखो, भइया इसे पानी में फेंक देगा और ऊदबिलाव ढूँढकर लायेगा। फिर सबके सामने बैठकर खायेगा। तुम देखती रहना। तुम फेंक नहीं पाओगी।'

रीति कौतूहल से ताकने लगती है। भइया लपक कर पापा के हाथ से मछली ले लेता है फिर उसे निशाना ताक कर ढेले की तरह फेंक देता है। 'छप्प।' की आवाज़ के साथ मछली पानी में गिर जाती है। फिर 'छम्म' से आवाज़ आती है और ऊदबिलाव डुबकी मारता है।

'वो देखो, ले आया।' भइया चिल्लाता है, 'देखो खा रहा है मछली

को।'

'पापा, एक मछली हम भी लेकर फेंकेंगे।' रीति अब जिद करती है।

'नहीं, बेटा।' पापा समझाते हैं, 'तुम फेंक नहीं पाओगी।'

'नहीं, नहीं, हम भी लेकर फेंकेंगे।' वह जिद पकड़ जाती है, 'हम भी फेंकेंगे, हम फेंक लेंगे।'

'अच्छा दे दो भाई, एक मछली और दे दो।' पापा एक सिक्का मछली वाले की तरफ फेंकते हुए कहते हैं।

'यह लीजिए बेबी।' कहता हुआ एक मछली रीति के हाथ में पकड़ा देता है। रीति पहले तो झटके से उसे फेंकना चाहती है—यह क्या आ गया उसके हाथ में? गिलगिली-गिलगिली-सी मछली। फिर वह उसे दबाकर उसे देखने समझने की कोशिश करती है।

'लाओ, हम तुम से फिकवा दें।' पापा उसका हाथ पकड़ कर जंगले के ऊपर लाते हैं और एक झटके के साथ मछली फिकवा देते हैं।

'वो पकड़ा।' भइया कहता है, 'वह देखो, खा रहा है मछली।'

रीति खुश हो जाती है। उसने भी मछली ठीक ही निशाने से फेंकी। लेकिन तभी वह गहरे सोच में डूबने लगती है। मछली खा रहा है। दाँत से चबा-चबा कर खाता होगा।

'कूँ कूँ क क हँ हँ हँ' एक तेज़ और कर्कश आवाज़ जैसे रीति के खयालों को बेध जाती है।' वह चौंक उठती है।

'बत्तख है, बत्तख।' कहता हुआ भइया आगे दौड़ जाता है। पीछे-पीछे बाकी लोग चलते हैं।

'यह तो बिल्कुल झील की तरह है।' सींखचों में लगी जाली को पकड़ कर कोई कहता है।

रीति भी जाली से भीतर झाँकने की कोशिश करती है। क्या अंदर पानी भरा हुआ है। बड़ी-बड़ी चिड़ियाँ, तरह-तरह की चिड़ियाँ, भाँति-भाँति की आवाजें, इधर से उधर उड़ती, पंख फैलाती, डैने फड़फड़ाती। क्या इन्हीं में कोई बत्तख है, जो चीख रही है, 'कूँ कूँ क क हँ हँ हँ।' कैसी डरावनी आवाज़ है।

'ह्वाँ···ह्वाँ···ह्वाँ'···हूँ फिर वैसी ही आवाज। ···सब लोग पीछे लौटते हैं।

'वो देखो ।' भइया इशारा करता है और रीति ताकने की कोशिश करती है । धूप की चकाचौंध से उसकी आँखों में पानी आ जाता है ।

'क्या है ?' वह पूछती है ।

'काला लंगूर ।' भइया बताता है, 'देखो, इसके हाथ भी पैरों के बराबर ही लम्बे हैं ।'

काला लंगूर। रीति सोचती है। इसके हाथ भी पैरों के बराबर ही लंबे हैं । यह भी अजीब बात है । जितने लंबे-लंबे पैर, उतने ही लंबे-लंबे हाथ। वह फिर चौंकती है । 'हवाँ'···ह्···ह्वाँ···ह' की आवाज़ एक भयानक चीत्कार की भाँति फिर आसमान में फैल जाती है । वह फिर ताकने की कोशिश करती है, एक काला काला-सा जानवर, शायद बंदर अपने रस्सियों जैसे हाथ पैरों से जंगलों में लटक-लटक कर इधर-उधर उछल कूद कर रहा है और वही यह विचित्र आवाज़ निकाल रहा है । बीसियों लोग उसे चारों तरफ से घेरे खड़े हैं और खुद भी वैसे ही बोल कर उसे भी और भी वैसे ही बोलने की प्रेरणा दे रहे हैं । ···एक तरह की होड़ सी लगी है । जानवर और इंसान दोनों अपने को एक दूसरे की तरह साबित करने की कोशिश कर रहे हैं और दोनों की आवाजों में धीरे-धीरे तेज़ी आती जा रही है।

'टं···टं···टें···टें···टें···ह्'एक और कर्कश आवाज़ रीति के कानों में पड़ती है ।

यह किसकी आवाज़ है। रीति चौंकती है । वह कान खड़े करके चौकन्नी होकर सुनने की कोशिश करती है । ·· कौन हो सकता है यह ? किसकी आवाज़ हो सकती है । वह अपने दिमाग पर बहुत जोर डालती है । एक बहुत जबरदस्त उदासी अचानक ही उसके मन में काफी गहराई तक पैठ जाती है । उसे अपनी विवशता पर आज फिर रोना आने लगता है । कैसी विचित्र दुनिया बनाई है भगवान ने, कैसी-कैसी चीजें यहाँ हैं, कैसे-कैसे आदमी, कैसे-कैसे जानवर, कैसे-कैसे पक्षी, रंग-बिरंगे, हरे, लाल, नीले, पीले, काले, सफेद, कितने-कितने छोटे और कितने-कितने बड़···। दुनिया का अभागे से अभागा आदमी यह सब देख सकता है, समझ सकता है।···लेकिन वह सबसे ज्यादा अभागी है । वह कुछ नहीं देख सकती । यहाँ तक कि अपनी मम्मी और अपने पापा को भी

नहीं। केवल उनकी आवाज़ों और उनके स्पर्श से ही वह उनका अनुमान लगा सकती है। भइये का चेहरा मोहरा भी वह उतना ही जानती है, जितना उसने उसे छोटे में खिलाते समय जाना था। तब वह एक थलथल बबुए की तरह था और वह उसके हाथ पैर मुँह नाक, आँख, कान को टटोल कर उसकी रूपरेखा समझने की कोशिश करती थी। अब भी उसकी इच्छा होती है कि वह उसे छू कर समझे, लेकिन अब वह थप्पड़ मार देता है। और यहाँ...बनारसी बाग में...कितने सारे और कितने तरह के जानवर हैं। कैसे होंगे ये सब। वह सिर्फ कुछ जानवरों का ही अनुमान लगा सकती है। सिर्फ़ उन्हीं जानवरों का, जिनके खिलौने उसके घर में मेले-टोले के मौके पर आते हैं। उसने शेर का खिलौना देखा है भालू का देखा है, कुत्ते का देखा है, बंदर का देखा है, तोते का देखा है... बाप रे बाप, वे सारे खिलौने जो उसने देखे हैं, वे सब यहाँ पर जिंदा मौजूद हैं। हाय! कितना दुर्भाग्य है, वह कुछ नहीं देख सकती, कुछ नहीं समझ पाती, उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं।

९

'देखो, वही वाला तोता है' भइया अगले जंगले के सामने खड़ा हो कर कह रहा है, 'जिसकी पूँछ खूब लंबी है।'

रीति को अब कोई उत्साह नहीं मालूम होता। सब कुछ व्यर्थ है। उसके लिए कोई चीज नहीं है इस दुनिया में···। वह उसी तरह से मौन रुदन करती रहती है।

'अरे, क्या हुआ रीति?' सहसा पापा पूछते हैं, 'रो क्यों रही हो?'

'ऐं!' अचानक ही कई लोग उसकी ओर मुखातिब हो जाते हैं। मम्मी पूछती है क्या बात है?'

'आओ, आओ। ···इधर आओ।' कहते हुए पापा भीड़ से निकल कर एक अलग मैदान में आ जाते हैं। कहते हैं, 'रीति को भूख लगी होगी।'

और यह सुनते ही रीति को सचमुच भूख लग आती है। वह अपना रोना भूलकर आँसू पोछने लगती है।

'क्या भूख लगी है?' मम्मी उसे पुचकारती हुई पूछती हैं।

'हाँ' वह सिर हिला देती है और उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगती है।

सब लोग घास पर एक चादर बिछा कर बैठ जाते हैं। मम्मी प्लास्टिक के झोले में से तरह-तरह की चीजें निकाल-निकाल कर सामने रखने लगती हैं। पापा अचानक ही किसी चीज का एक टुकड़ा रीति के मुँह में चुपचाप रख देते हैं। यह अपना सारा दुख दर्द भूल कर उसे खाने

जाते हैं। सीढ़ियों के बाद सामने ही एक शीशे का बड़ा सा संदूक रखा है। उसमें सफेद कपड़े पहने हुए कोई लेटा है। ऐसा लगता है जैसे किसी के सारे शरीर पर सफेद-सफेद पट्टियाँ बाँध दी गयी हों और उन पर चूना पोत दिया गया हो।

'ममी!' भइया पढ़ता है, मिस्र की ममी।'

'ममी', रीति सहमी हुई सी सुखती है, 'मिस्र की ममी।'

पापा बताते हैं, कई हजार साल पहले मरी हुई एक औरत की लाश को मसालों में लपेटकर अभी तक रखा गया है।...रीति उनकी उँगली कस कर पकड़ लेती है और उनके और भी नजदीक सिमट आती है। यह एक मरी हुई औरत है।...एक मरी हुई औरत की लाश है। कई हजार साल पहले यह मर चुकी है। और इसे मसालों में लपेट कर रखा गया है।...इस शीशे के संदूक में एक मरी हुई औरत लेटी है।... औरत...मरी हुई औरत। इसका नाम 'ममी' है। यह औरत भी किसी बच्चे की 'ममी' है।...रीति उसे आँख फाड़-फाड़ कर देखती और सहमती है। वाकई में वहाँ मौत जैसा सन्नाटा छाया हुआ है। रीति को याद आता है, इसी तरह का सन्नाटा उसने अस्पताल में अनुभव किया था, जब उसकी आँखों का आपरेशन हुआ था। वहाँ पर भी ऐसी ही स्तब्धता थी, मौत जैसी।...रीति का कलेजा धक् से हो कर रह जाता है।

'अरे बाप रे!' भइया शीशे के एक और संदूक के पास खड़ा हुआ है दीवार की तरफ, 'देखो तो कितना बड़ा बाघ है।'

रीति भी उसी तरफ बढ़ती है। शीशे के भीतर एक बाघ खड़ा है। यह भी मरा हुआ ही होगा। भइये के शब्द उसके कानों में टकरा रहे हैं, 'इसके दाँत देखो, कितने बड़े-बड़े हैं। और पंजे, अरे गजब इसी से भैंसों को मार कर खा जाता है। अरे इसकी लम्बाई सात फुट है। ओफ्फो।'

रीति को ऐसा लगता है, जैसे कोई बहुत बड़ी कब्र हो या एक बहुत बड़ा ताबूत...उसी में तमाम मुर्दा जानवर जमा हों, उनकी लाशें दफ़न हों और एक बड़ी भारी इंसानों की भीड़ तमाशबीन सी हो।

मगरमच्छ, बनैला, चीता, भालू शेर...सब के सब मुर्दा...बड़े-बड़े

शीशों के संदूक में रखे हुए, तस्वीरों की तरह से जुड़े हुए···तभी तो इतने तमाशबीन जमा हैं···लेकिन ये सब भी तो कभी जिंदा रहे होंगे··· रीति का कलेजा एकदम से काँप उठता है···मान लो, ये लोग फिर से जिंदा हो जाएँ, सब के सब···तो क्या होगा···तब तो ये जरूर रीति को मार कर खा जाएँगे।···और एकदम से उसे अपना दम घुटता सा लगता है।

'पापा', रीति सहमी हुई आवाज़ में कहती है, 'यहाँ से बाहर चलो।'

'क्यों, देखोगी नहीं अभी और जानवरों को ?'

'नहीं, नहीं, बाहर चलो।'

'अच्छा, चलो।'

'नहीं, नहीं' भइया विरोध करता है, 'अभी हम और देखेंगे।'

'नहीं, चलो देर हो रही है। 'कहते हुए पापा बाहर की ओर चल पड़ते हैं। अँधेरे मकबरे की बुसी हुई हवा और सीली हुई घुटन धीरे-धीरे कम होने लगती है। घुमावदार गलियारे से होते हुए सब लोग बाहर आ जाते हैं।

बायीं तरफ बबर शेर है।···रीति सुनती रहती है। बबर शेर···। यही जंगल का राजा होता है। इसका मुँह खूब बड़ा होता है। चारों तरफ बड़े-बड़े बाल फैले रहते हैं। बड़ी जोर से थप्पड़ मार कर बड़े से बड़े जानवरों को गिरा देता है। फिर दाँतों और पंजों से उन्हें फाड़ कर खा जाता है।···बबर शेर···बबर शेर।

'चलो, अभी भीतर सो रहा है।' सब लोग उसके स्थान की परिक्रमा करते हुए से आगे बढ़ चलते हैं।

'इसमें दो बाघ रहते हैं।' अगले जंगले के पास से आवाज़ सुनाई पड़ती है।

'क्या हैं नहीं, जानवर ?' कोई और आवाज़ आती है।

'नहीं, है क्यों नहीं ?···पीछे कोठरी में सो रहे हैं।'

एक हजूम-सा आगे बढ़ने लगता है। न जाने कितने आदमी हैं इस भीड़ में। सबके सब जा कर पीछे रुक जाते हैं।

'लिहे, लिहे।' न जाने कौन-कौन लोग पशुओं जैसी आवाज़ में बोलने की चेष्टा करते हुए सोए हुए बाघ को जगाकर बोलने की प्रेरणा

देते हैं, 'लिहे, लिहे, लिहे, लिहे।'

कुछ लोग छोटे बड़े ढेले मार कर भी उसे जगाने और बोलने का संकेत करते हैं।

'हैं, हैं' तभी न जाने कहाँ से रखवाला आ जाता है और मना करता है, यह न करिए साहब! यह आप लोग क्या करते हैं?'

ज्यादातर भीड़ छँट जाती है। कुछ लोग वहीं खड़े रहते हैं। उन्हें ध्यान से देख समझ कर रखवाला सींखचों की दीवार छलाँग कर अन्दर चला जाता है। वहाँ खिड़की में हाथ डाल कर सोए हुए बाघ की पूँछ ऐंठ कर उसे हुसकाता है। बाघ जागता है और रखवाले के परिचित संकेत समझ कर गगनभेदी गर्जना करता है। 'घ् घ् ह् वाँ···वाँ···ह् वाँ···ह् वाँ।'

···रीति सहम कर पापा से चिमट जाती है।

रखवाला दूसरी खिड़की पर जाकर वहाँ भी इसी तरह करता है। वह बाघ पहले तो गुर्राता है, फिर वैसे ही गर्जना करता है, 'घ् घ् ह् वाँ···वाँ···ह्वाँ···ह्वाँ।'

रीति फिर चौंकती है।···यह आवाज़ तो वह कभी-कभी रात के सन्नाटे में अपने घर पर भी बिस्तर में दुबकी हुई सुना करती है।···तो यह बाघ बोलता है। ···यहाँ बनारसी बाग में बाघ बोलता है और इसकी आवाज़ वहाँ घर पर जाती है। इतनी दूर तक बाघ की आवाज़ जाती है।

'साहब सलाम!' तभी रखवाला फिर सींखचे फाँद कर बाहर आ जाता है और पापा को सलाम करता है।

पापा चुपचाप जेब से एक सिक्का निकाल कर उसके हाथ पर रख देते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। ···रीति सोचती है कि हाथी वाले ने सलाम करवाया था तब भी पापा ने पैसे दिये थे और शेर वाले ने सलाम करवाया तब भी उसे पैसे दिये। तो फिर क्या यह बाघ ने भी चिल्लाकर रीति को सलाम किया था। रीति के चेहरे पर एक हल्की-सी शंकालु मुस्कान लहरा जाती है। उसे बाघ ने भी सलाम किया था, जैसे हाथी ने किया था। हाथी और बाघ दोनों ने ही रीति को सलाम किया था। ···वह जा कर सबको बतायगी कि उसे हाथी ने भी सलाम किया था

ग्रौर बाघ ने भी। हाथी का तो नाम था गज्जू ग्रौर बाघ का···? बाघ का क्या नाम था ?···

'पापा इस बाघ का क्या नाम था ?' वह सहसा पूछती है।

'बाघ का नाम था सुन्दर ग्रौर बाघिन का नाम था सुन्दरी।'

ऐं ! बाघ का नाम था सुन्दर ग्रौर बाघिन का नाम था सुन्दरी। तो फिर ये दोनों बाघ नहीं थे। एक बाघ था ग्रौर एक बाघ की बीबी थी। एक का नाम था सुन्दर ग्रौर दूसरे का नाम था सुन्दरी। वाह, सुन्दर ग्रौर सुन्दरी, बाघ ग्रौर बाघिन।

दाहिने हाथ के घुमाव के बाद दो कटघरे ग्रौर हैं। ···एक में कोई बुँदकीदार जानवर था ग्रौर दूसरे में काला काला। लेकिन रीति उधर कोई ध्यान नहीं देती। उसके दिमाग में सुन्दर ग्रौर सुन्दरी ही घूमते रहते हैं।

···ग्रागे चल कर एक बड़ा मैदान-सा है, उसमें नीचे एक नाला है ग्रौर इधर-उधर ऊँचा-नीचा ढाल, थोड़ा-सा सपाट मैदान।

'गैंडा !' भइया चिल्लाता है, 'वो देखो गैंडा। उधर जा रहा है ग्रपनी कोठरी की तरफ।'

गैंडा ! रीति चौंकती है। यह कौन-सा जानवर होता है, गैंडा।

'इसकी खाल बड़ी मजबूत होती है।' भइया कहीं सुनी हुई बात कहता है, 'इस पर बंदूक की गोली भी ग्रसर नहीं करती।'

इसकी खाल पर बंदूक की गोली भी नहीं ग्रसर करती। जिस बंदूक की गोली से शेर, भालू, बाघ, चीता, हाथी मर जाते हैं, वह बंदूक की गोली गैंडे पर नहीं ग्रसर करती। ऐसा होता है गैंडा। कैसा होता है गैंडा।

'इसका वज़न हाथी से ज्यादा होता है।'

हैं ! इसका वज़न हाथी से ज्यादा होता है। यानी यह हाथी से भी भारी होता है। तब तो शेर, भालू, चीते, बाघ से भारी होता होगा। कितना बड़ा होता होगा गैंडा।

'यह ग्रपने सींग से शेर को उछाल कर मार डालता है।'

सींग ! क्या गैंडे के भी सींग होता है। वैसा ही सींग जैसा गाय, भैंस के होता है। या जैसे सींग बारहसिंगे के होते हैं। गैंडे के भी वैसा

ही सींग होता है।

'इसका सींग नाक पर होता है।'

हैं! नाक पर सींग होता है। गैंडे की नाक पर सींग होता है। उसी सींग से यह शेर तक को उछाल कर मार डालता है। इसकी नाक कैसी होती होगी और उसके ऊपर सींग कैसा होगा?

'जल्दी-जल्दी आओ' भइया मम्मी के हाथ से अपना हाथ छुड़ा कर आगे भाग जाता है, 'गैंडा अपनी कोठरी में आ गया है।'

सब लोग आगे बढ़कर एक जंगले से लग कर खड़े हो जाते हैं। वहाँ पर जोर-जोर से खट्‌खट्‌ की आवाज़ें होती रहती हैं। एक निश्चित क्रम से खट्‌ खट्‌ खट्‌ खट्‌...।

'यह क्या हो रहा है?' रीति पूछती है।

'गैंडा गुस्से में है' भइया गौर से सामने ताकता हुआ बताता है, 'अपने सींग इधर-उधर के सींखचों में मार रहा है।'

भइये की आवाज़ में रोमांच है। रीति सहम जाती है। गैंडा गुस्से में है। वह गैंडा, जिसकी खाल पर बंदूक की गोली भी असर नहीं करती, वह गुस्से में है। जो गैंडा, अपनी नाक के ऊपर बने हुए सींग से शेर, भालू, चीते, बाघ सबको उछाल कर मार डालता है, वह गुस्से में है। अपना सींग गुस्से में सींखचों से मार रहा है। ...रीति सामने देखने की कोशिश करती है। कुछ स्पष्ट नहीं नजर आता। एक सपाट दीवार, एक मौखला, शायद जंगला, उसके भीतर अँधेरा, पीछे कुछ काला-सा हिलता डुलता-सा...शायद वही गैंडा है। इस वक्त वही गैंडा गुस्से में है।

'पापा, चलो।' वह भयभीत होकर कहती है, 'यहाँ से चलो।'

उसे भय होता है कि कहीं ऐसा न हो कि गैंडा यह जंगला तोड़ कर बाहर निकल आए और रीति को भी अपनी नाक पर बने हुए सींग से उछाल कर मार डाले।

'हरे, अरे हटो, हटो' पापा सहसा रीति को खींच कर अलग कर लेते हैं और जमीन पर पड़े हुए ईंटों के टुकड़ों को ठोकर मार कर दूर करने लगते हैं, 'कनखजूरा है, हटो, यहाँ पर कनखजूरा है।'

सब लोग अलग हट आते हैं और घूम कर चलने लगते हैं।... कनखजूरा...रीति सोचती है, कांतल, जिसके खूब सारे पैर होते हैं, डंक

की तरह, वह अपने सारे डंक लगा कर खाल में चिपक जाती है और खून पीकर आदमी को मार डालती है। रीति दो तीन बार अपने पैर पटकती और झटकती है, कहीं ऐसा न हो कि कनखजूरा उसके पैरों पर चढ़ रहा हो, डंक मार कर खून पीने के लिए।···वह जल्दी जल्दी पैर चलाने लगती है।

'हम झूला झूलेंगे' भइया गैंडे के जंगले की चहारदीवारी से लगी पगडंडी पर दौड़ता हुआ आगे बढ़ जाता है, 'और सीढ़ी चढ़कर फिसलेंगे।'

झूला और सीढ़ी···रीति का ध्यान बँटता है। पेंग मार कर झूले पर झूलना और सीढ़ी पर चढ़ कर सर्र से फिसलते हुए नीचे आना।··· एक मुस्कराहट उसके ओठों पर नाचती है।

'हम भी झूला झूलेंगे।' वह पापा से कहती है, 'और सीढ़ी चढ़ कर फिसलेंगे।'

'अच्छा।' पापा कहते हैं।···रीति के पैर अब और तेज पड़ने लगते हैं। पगडंडी के बाद एक छोटा-सा पक्का पुल आता है, चिकना और घुमावदार।···रीति पापा का हाथ सम्हाल कर पकड़ लेती है। नीचे नाला और मैदान है।···इसी नाले में गैंडा नहाता और पानी पीता है और इसी मैदान में घूमता है, घास खाता है, पत्तियाँ खाता है।···

···आगे एक बहुत बड़ा पार्क है। भइया पहले से ही पहुँचकर एक झूले पर बैठ गया है।···पापा दूसरे झूले पर रीति को बैठा देते हैं। वह दोनों हाथों से अगल बगल की जंजीरें पकड़ कर पटरे पर ठीक से बैठ जाते हैं। पापा उसे धीरे से पेंग दिलाकर छोड़ देते हैं,। वह हवा के झोंकों पर तैरने लगती है। इधर से उधर और उधर से इधर। वाह, क्या मजा आता है। उसका हृदय उत्साह से भर जाता है। कलेजा खुशी से उछलने लगता है। थोड़ी देर के लिए वह अपनी सीमाएँ भूल जाती है और जोर-जोर से पेंग मारने लगती है। और आगे, और पीछे, और ऊपर, और ऊपर। और यहाँ तक कि उसे डर लगने लगता है।···ऐसा लगता है जैसे उसके दोनों हाथों से जंजीरें छूट जायेंगी और वह नीचे गिर पड़ेगी। उसका सिर फट जायेगा और वह मर जायेगी। वह पास में खड़े हुए पापा को देखने की कोशिश करती है। लेकिन पेंग के झोंकों में सारी दुनिया उसे ऊपर-नीचे होती लगती है।

'पापा ।' 'वह आशंका से काँपती हुई आवाज़ में पुकारती है ।

'हाँ, बेटा ।' 'पापा धीरे-धीरे उसका पटरा पकड़ कर पेंग हल्का करते हुए कहते हैं, 'हम यहीं खड़े हैं, तुम धीरे धीरे झूलो ।'

'नहीं, अब नहीं झूलेंगे ।' वह उनसे पेंग रोकने को कहती है, 'अब हम सीढ़ी पर फिसलेंगे ।'

पापा दोनों हाथों से उसके पटरे को पकड़ कर पेंग रोक देते हैं । वह कूदकर नीचे उतर आती है और झूले के नीचे बन गये गढ़े में गिरते-गिरते बचती है । फिर पापा उसे सम्हाल लेते हैं । लेकिन वह उनके सहारे को छोड़कर आगे भागना चाहती है । पापा फिर उसे सम्हाल लेते हैं और सहारा दे कर ही आगे चलते हैं । ···उसे फिसलने वाली सीढ़ी पर ला कर खड़ा कर देते हैं । वह सीढ़ी पकड़ कर ऊपर चढ़ जाती है । फिर धीरे से आगे फिसलती है । सन्···न्···न्···न्···छप् । एकदम से नीचे आ कर उसके दोनों जूते जमीन पर टिकते हैं ।

'चोट तो नहीं लगी ।' पापा उसे उठाते हुए पूछते हैं ।

'नहीं ।' वह कहती है ।

'आओ रीति' इस ऊपर नीचे होने वाले पटरे पर बैठो ।' भइया एक लम्बे पटरे को फटफटाता हुआ कहता है ।

पापा सम्हालकर रीति को पटरे के एक किनारे पर बैठा देते हैं और आगे जड़ी हुई लोहे की छड़ उसे दोनों हाथों से पकड़ा देते हैं । भइया जब उधर ऊपर उचकता है तो वह नीचे आ जाती है और जब उसकी तरफ का पटरा ऊपर जाता है तब भइये की तरफ का हिस्सा नीचे हो जाता है । वाह, क्या मजेदार खेल है ।

'आओ रीति, उस नाव पर बैठो ।' मम्मी कहती हैं ।

'हम भी बैठेंगे । 'कहता हुआ भइया पटरे को भड़ाक् से छोड़कर नाव पर बैठ जाता है । रीति के पैरों पर पटरा गिरते-गिरते बचता है । पापा बीच में ही उसे रोक देते हैं । फिर उसे सम्हाल कर नाव पर बैठा देते हैं । ···नाव का भी वैसा ही हिसाब है । एक तरफ रीति बैठती है और दूसरी तरफ भइया ।···वैसे ही पेंग की तरह इधर-उधर ऊपर नीचे, फिर चक्कर, फिर झूला, फिर सीढ़ी, फिर पटरा, फिर नाव···रीति हाँफने लगती है ।

'अब चलो।' आखिर कार पापा कहते हैं और सब लोग पार्क के किनारे-किनारे आगे बढ़ने लगते हैं। मुख्य सड़क पर आने के बाद भइया मम्मी का हाथ पकड़ कर दाहिनी ओर खींचने लगता है।

'हम साँप का घर भी देखेंगे।' वह जिद करता है।

साँप का घर ! रीति फिर चौंक जाती है। यानी इस घर में साँप रहते हैं।

'नहीं, अब चलो।' पापा भइये को मना करते हुए कहते हैं, 'अब बहुत देर हो गई है।'

'नहीं, नहीं, साँप का घर भी दिखा दो।' भइया फिर जिद करता है और रीति से पूछता है, 'रीति तुम भी देखोगी साँप का घर ?'

'हाँ, हाँ' रीति अनिश्चय में ही अचकचा कर कह देती है, 'हम भी देखेंगे साँप का घर।'

'अच्छा, आओ।' पापा कहते हैं और बस लोग दाहिने हाथ मुड़ कर एक छोटे लोहे के सींखचों वाले फाटक के अन्दर चले जाते हैं।

...एक लम्बा सा कमरा है। उसमें भी शीशे के छोटे बड़े संदूकों जैसी खिड़कियाँ हैं।...रीति उनमें झाँकने की कोशिश करती है। कुछ साफ नहीं दिखाई देता है।...अगले दरवाज़े से चलते हुए पापा बाहर निकल आते हैं। मम्मी भी भइए का हाथ पकड़े जल्दी-जल्दी चलती आती हैं।...आगे एक बड़ा सा गहरा कुआँ है।... उसकी मुँडेर से झुक कर नीचे झाँकते हुए पापा रीति को भी उचका कर नीचे झँकाते हैं। कहते हैं, 'वह देखो।'

'हाय, कितना बड़ा साँप है।' तब तक भइया भी आ कर नीचे झाँकता हुआ आश्चर्य से चिल्लाता है।

'कितना बड़ा साँप है ?' रीति पूछती है।

'अरे रीति बहुत बड़ा साँप है, खूब मोटा साँप है। हाय गजब, इतना बड़ा साँप।'

'और वह खरगोश क्या मरा हुआ पड़ा है ?' मम्मी पूछती है।

'हाँ, वह खरगोश भी मरा पड़ा है।' भइया चिल्लाता है।

'नहीं' पापा कहते हैं, 'मरा नहीं है, जिंदा है।'

'जिंदा खरगोश वहाँ किसलिए रखा गया है ?'

'यह साँप की खुराक है, उसका खाना है।' पापा कहते हैं, 'अभी साँप सो रहा है। जब यह जागेगा और इसे भूख लगेगी, तब यह इस खरगोश को खा जायेगा।'

'कैसे खा जायेगा?' रीति पूछती है, 'खरगोश भाग नहीं जायेगा?'

'नहीं' पापा बताते हैं, 'भाग कर कहीं जाने की जगह ही नहीं है। ...वह तो पहले ही अधमरा हो रहा है। जानता है कि किसी भी वक्त साँप जागेगा और उसे खा जायेगा।'

'अपने दाँत से काट काट कर खायेगा?' रीति पूछती है।

'नहीं, 'समूचा निगल जायगा।'

हाय, बेचारा खरगोश! अभी साँप इसे समूचा निगल कर खा जायेगा।...अभी साँप सो रहा है और उसे भूख नहीं है। जैसे ही साँप जागेगा, उसे भूख लगेगी और तब वह फौरन ही खरगोश को निगल कर खा जायेगा। खरगोश भाग भी नहीं सकता, क्योंकि कुएँ के अन्दर कहीं भागने की जगह नहीं है, साँप उसे दौड़कर पकड़ लेगा।

'आओ, दूसरी तरफ चलें।' सब लोग वहाँ से घूमकर दूसरी तरफ चलते हैं। वहाँ पर भी शीशे के बहुत बड़े-बड़े कमरे हैं। उसमें गुड़ी-मुड़ी बने लम्बे-लम्बे साँप बैठे हैं।

'अरे, इस साँप के पेट में क्या हो गया है?' तभी भइया एक साँप के पेट की तरफ इशारा करता हुआ पूछता है, 'इसका पेट लोटे की तरह फूला हुआ क्यों है?'

'इसने अभी एक समूचा खरगोश निगलकर खाया है' पास खड़ा रखवाला बताता है, 'इसीलिए इसका पेट फूला हुआ है।'

हाय राम, रीति सोचती है, उस साँप के सामने भी खाने के लिए एक खरगोश रखा था, खाने के लिए और इसके सामने भी था। वह साँप सो रहा था, और उसे भूख नहीं लगी थी, इसीलिए उसने खरगोश को नहीं खाया था। यह साँप जाग रहा था और भूखा था, इसी लिए इसने खरगोश को खा लिया। वैसा ही सफेद-सफेद खरगोश। भाग नहीं पाया होगा। और भागा होगा, तो साँप ने उसे दौड़ कर पकड़ लिया होगा। फिर उसे निगल कर खा लिया होगा। वही खरगोश इस वक्त इसके पेट में है। इसीलिए इसका पेट लोटे की तरह फूला हुआ

है।···हाय, बेचारा प्यारा-प्यारा खरगोश !···

'पापा, इधर आओ' तभी भइया पीछे की तरफ इशारा करता हुआ कहता है, 'यह देखो, यह क्या है ?'

'साही है, साही !' पापा बताते हैं, 'इसके सारे शरीर में काँटे होते हैं।'

साही ! इसके सारे शरीर में काँटे लगे होते हैं।

'अरे, यहाँ भी खरगोश हैं।' भइया अगले दरबे की ओर देखता हुआ कहता है।

'हाँ, ये सारे खरगोश इन साँपों के खाने के लिए हैं।'

'हाय, बेचारे खरगोश। रीति सोचती है। ये सारे खरगोश इन साँपों के खाने के लिए हैं। इन सबको साँप निगलकर खा जायेंगे···।

'यहाँ भी पार्क में झूले, नाव और फिसलने वाली सीढ़ियाँ हैं।' भइया मम्मी का हाथ छोड़कर भाग जाता है। लेकिन रीति का मन उचट जाता है। ···इन सारे खरगोशों को ये साँप निगल कर खा जायेंगे। ···बेचारे खरगोश, खूब प्यारे-प्यारे। वह पापा का हाथ पकड़ कर बाहर की ओर चलने लगती है। बाहर आ कर उसके पैर फिर से एक बार रेलगाड़ी की पटरियों से टकराते हैं। वही रेलगाड़ी जिस पर वह बैठ चुकी है।

'आओ, देखोगी रेलगाड़ी का घर ?' सहसा पापा पूछते हैं।

'हाँ।' रीति कहती है। उसके लिए ज्यादातर चीजों को 'देखने' का मतलब है उन्हें 'छूना', स्पर्श से उन्हें समझने की कोशिश करना।

'लो देखो।' पापा उसकी हथेली पकड़ कर टीन की एक दीवार पर रख देते हैं। कहते हैं, 'देखो, यह रेलगाड़ी का घर है। और यह देखो, इसका दरवाजा बंद करके इसमें ताला बंद कर दिया गया है। यह देखो कंडी लगी है और यह देखो इसमें ताला लटका है।'

रीति अच्छी तरह से दरवाजे को, कुंडी को और ताले को छूकर, टटोल कर देखती है।···तो फिर यह है रेलगाड़ी का घर। इसी में आ कर रेलगाड़ी शाम को खड़ी होती है और उसमें दरवाजा बंद करके ताला लगा दिया जाता है।

'क्या अब रेलगाड़ी नहीं चलेगी ?'

'अब कल चलेगी। ···रात में यह अपने घर में सोयेगी।'

रीति के ओठों पर एक बार फिर मुस्कराहट आती है। वाह, क्या बात है, रेलगाड़ी रात में अपने घर में सोयेगी।

और यह बड़ा फाटक आ जाता है, बनारसी बाग का बड़ा फाटक। यहाँ इस वक्त भी वैसी ही रौनक और भीड़-भाड़ है।···

१०

'तुम कौन हो ?' मास्टर साहब पूछ रहे हैं, 'किनारे कौन बैठा है, अपना नाम बताओ ।'

'जी शिवराम ।' एक महीन आवाज़ आती है ।

'अच्छा, ठीक है, शिवराम' मास्टर साहब कहते हैं, 'तुम पढ़ो । बोलो ···घ···र···क्या हुआ ? ···घर ।'

एक महीन आवाज़ फिर आती है 'घ' 'र'···'घर'।

रीति सोचती है, 'घर'। उसका घर बहुत बड़ा है, कितने आदमी रहते हैं उसमें । कमरे हैं, छतें हैं, आसपास···।

'और कौन है तुम्हारे बगल में ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'बताओ, शिवराम के बाद कौन है ?'

'जी हरखू' एक दूसरी आवाज़ आती है ।

'तुम पढ़ो ।' मास्टर साहब कहते हैं, 'हाँ बोलो···प···र···क्या हुआ···'पर' ।

एक महीन आवाज़ आती है, 'प' 'र' · 'पर' ।

'पर माने जानते हो न ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'पर माने पंख, चिड़िया के पंख । देखा है न कैसे पंख फड़फड़ाती हुई चिड़िया उड़ती है ।'

रीति गम्भीर हो जाती है 'पर' माने पंख, यानी चिड़िया के पंख । एक बार उसे छुटके ने अपनी कापी में जमा किये हुए तमाम चिड़ियों के खूब सारे पर दिखाये थे ।

'कौन है ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'तुम्हारे बाद कौन है हरखू ?'

'जी मैं लाजो ।' जवाब आता है । रीति निगाह घुमा कर देखती है, लाजो कसमसा कर सीधी बैठ जाती है ।

'लाजो ? ···तुम पढ़ो' मास्टर साहब कहते हैं, 'न' 'र' क्या हुआ··· 'नर' ।

'न' 'र' 'नर' । लाजो कहती है ।

'नर' माने ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'नर माने बताओ ।'

लाजो चुप रहती है । रीति को ऐसा बोध होता है, जैसे लाजो की ज्योतिहीन आँखें सामने शून्य में टंगी हैं ।

'नर' माने आदमी । 'मास्टर साहब समझाते हैं ।

'नर माने आदमी ।' रीति चौंक पड़ती है : आदमी होता है नर का मतलब । आदमी यानी···पापा···पापा आदमी हैं तो पापा नर भी हैं । आदमी 'नर' को कहते हैं ? 'नर' ? आदमी ? 'नर' माने आदमी । वह आज ही जा कर मम्मी को बतायेगी कि पापा 'नर' हैं ।

'फिर कौन है बगल में ।' मास्टर साहब की कर्कश आवाज़ गूँजती है ।

कोई जवाब नहीं आता ।

'कौन है लाजो के बगल में ?' मास्टर साहब जैसे सूनेपन में दाँत किटकिटाते हुए दहाड़ते हैं ।

'जी, रीति है !' लाजो सहमती हुई जवाब देती है ।

'रीति ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'तुम हो लाजो के बाद ?'

रीति चौंकती है । उसका कलेजा घक् घक् करने लगता है । 'नर' माने आदमी भूल कर वह सहम कर जवाब देती है, 'जी ।'

'तो फिर बोलती क्यों नहीं हो ?' मास्टर साहब झुँझलाते हैं, 'जी, जी करती हो ।'

रीति चुप रहती है ।

'बोलो, बोलो, तुम बोलो आगे' मास्टर साहब कहते हैं, 'पढ़ो 'न' 'ख' क्या हुआ ?'

रीति की महीन उँगलियों की पोरें किताब के उभरे बिन्दुओं का स्पर्श करने लगती हैं ।

'बोलो ?' मास्टर साहब फिर कहते हैं 'न' और 'ख' 'नख' ।

रीति भी जवाव में कह देती है, 'न' और 'ख' 'नख'।

'बताओ 'नख' माने ?' मास्टर साहब पूछते हैं, तुम्हें नख माने मालूम है ?'

'नख माने ?' रीति सोचने लगती है, 'नख' माने···

'बताओ, नख माने ? मास्टर साहब फिर ललकारते हुए पूछते हैं, 'नख' माने बताओ···अरे···अरे 'नख' माने नाखून। तुम्हारी उँगलियों में नाखून हैं न ? वही। 'नख' माने नाखून।'

रीति फिर चौंकती है, 'नाखून। नख माने नाखून। उँगलियों वाले नाखून। अजीब बात है, नख माने नाखून।'

'तुम्हारे बाद कौन है, रीति ?' मास्टर साहब पूछते हैं, 'कौन है रीति के बाद ?'

रीति चुप रहती है। उसकी धुँधली आँखें अनायास ही बगल की ओर घूम कर जैसे अँधियारे में उलझ जाती हैं। वह कुछ नहीं बोलती। लेकिन उसी अँधियारे को चीरती हुई एक सहमी-सी आवाज़ उभरती है, 'जी मैं हूँ, दया परशाद।'

'ठीक है' मास्टर साहब कहते हैं, 'तुम पढ़ो दया परशाद···आगे पढ़ो।'

'जी' दया परशाद पड़ता है, 'र···र···।'

'ठीक है, शाबास,' मास्टर साहब कहते हैं 'र' और ?'

'जी' 'र···और 'ख' ···र···ख··· 'रख'। 'दया परशाद अटकता हुआ पढ़ता है, 'र' 'ख' 'रख !'

'शाबास, ठीक है' मास्टर साहब फिर कहते हैं, 'और है तुम्हारे बाद कोई ?'

कोई जवाब नहीं आता। ···और इसके पहले कि मास्टर साहब कुछ और बोलें, 'टन टन टन टन···न···न···न···न' करके घंटा बज उठता है। एकदम से भगदड़-सी मच जाती है। भटर-भटर करके कुरसी मेजें खिसकने लगती हैं। सब लोग भागते हैं। बरामदे में भी घसर-पसर मची रहती है। सब लोग सशंकित, भयभीत, लेकिन फिर भी मसखरे-पन से बाज न आने वाले। एक-दूसरे को टोहते और दीवार को छूते आगे बढ़ रहे हैं। चक्करदार सीढ़ियों पर भी भीड़ है। सीढ़ियाँ एक तरफ

पतली और एक तरफ चौड़ी हैं। वहाँ पर सब लोग और भी ज्यादा चौकन्ने हो जाते हैं। ···कई बार वहाँ दुर्घटनाएँ हो चुकी हैं। दाहिनी तरफ की सीढ़ी के चौड़े होने के भ्रम से कई बार अंधे बच्चे लड़खड़ाते लुढ़कते नीचे पहुँच गये हैं और उनके खोपड़े फट गये हैं। ···लेकिन लाख एहतियात रखने के बावजूद भी बच्चे जब ऊपर से रेले में आते हैं, तब भगदड़ में कोई न कोई गिर ही जाता है और उसको उठाने में दूसरा गिर पड़ता है। इस गिरापड़ी में किसी-न-किसी को चोट लग ही जाती है।

अगली कक्षा 'केन' की है। ···एक छोटे से कमरे में केन मास्साब बैठे रहते हैं। उनके इर्द-गिर्द छोटे-बड़े स्टूल, कुरसी वगैरह बिने अधबिने पड़े रहते हैं। कभी-कभी ऊँची कक्षाओं के कुछ लड़के उन कुरसियों के पास बैठे उन्हें बुनते भी रहते हैं।

'देखो, लड़ो भिड़ो नहीं' केन मास्साब लड़कों के आने को, शोर शराबे से पहचान जाते हैं, 'वरना तुम्हारे चोट लग जायेगी।'

सब बच्चे चौकन्ने होकर शांत हो शंकित हो जाते हैं, कौन लड़ रहा है, कौन भिड़ रहा है, किसके चोट लग रही है, किसको केन मास्साब मना कर रहे हैं।

'तुम कौन हो ?' केन मास्साब पूछते हैं।

'हर परशाद।' जवाब मिलता है।

'तुमको हमने कल बताया था बैंत में गाँठ लगाना ?'

'जी मास्साब।'

'तुम लगा सकते हो गाँठ !'

'नहीं मास्साब।'

'अच्छा देखो, आज हम फिर तुम्हें बताते हैं, आज ध्यान से सीखना। केन मास्साब कुरसी बुनने वाले बेंत का एक छोटा-सा टुकड़ा उठाते हैं और उसमें फंदा लगा कर उसे देते हुए कहते हैं, 'लो किनारे बैठ जाओ और बार-बार यह गाँठ खोलो, लगाओ।'

'अच्छा मास्साब !' हर परशाद किनारे चला जाता है।

'तुम कौन हो ?' केन मास्साब फिर आवाज़ लगाते हैं।

'जी मास्साब ?' रीति पूछती है।

'तुम कौन हो ?' वह फिर घुड़कते हैं।' 'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'जी, रीति···।'

'हाँ, रीति' मास्साब कहते हैं, 'तुम्हें हमने बताया था न बेंत में गाँठ लगाना ?'

'जी मास्साब।' रीति जवाब देती है।

'अच्छा देखो, यह बेंत का टुकड़ा है न, जिससे कुरसी बुनी जाती है।' केन मास्साब कहते हैं, 'जानती हो न तुम्हारे घर में जो कुरसियाँ हैं न, वे इसी बेंत से बुनी जाती हैं। ···तो यह देखो, इस तरह से बेंत में गाँठ लगाते हैं। ···तुम यह टुकड़ा लेकर किनारे बैठो, और इसमें गाँठ लगाना और निकालना सीखो, फिर तुम्हें कुरसी बुनना आ जायेगा।···'

'जी मास्साब।' वह जवाब में हाथ बढ़ा देती है और सुतली के के पतले टुकड़े की तरह एक बेंत का महीन टुकड़ा उसके हाथ में आ जाता है।

अब मास्साब लाजो से वही सवाल पूछ रहे हैं। रीति अपनी दाहिनी आँख के एकदम नजदीक ला कर उस टुकड़े को देखती है। मटमैला, मटमैला-सा एक छोटा-सा बेंत का टुकड़ा। ···इसमें गाँठ लगानी है। वह कई बार घुमा-फिरा कर, इधर-उधर मोड़कर, नचाकर उसमें गाँठ लगाने की कोशिश करती है, लेकिन वह ज्यों-का-त्यों ही रहता है। उसके दिमाग में झनझनाहट-सी होने लगती है, कुछ थकावट कुछ दर्द-सा अनुभव होता है। ···मास्साब ने कैसे उँगलियाँ नचा कर इसमें गाँठ लगाई थी।··· वह भी कोशिश करती है लेकिन फिर वह गाँठ नहीं दे पाती, वह अपने हाथ से बिना गाँठ दिये ही एक छल्ला-सा मोड़कर बेंत को फिर आँख के पास लाकर देखती है, लेकिन फिर वह वैसा ही सीधा हो जाता है। ···उसकी आँख में भी दर्द होने लगता है। ···वह सोचती है, थोड़ी देर और होगी अभी, फिर तो खाने की छुट्टी होगी। ···और यह ध्यान आते ···और यह ध्यान आते ही वह फंदा लगाना भूल कर खाने की छुट्टी और खाने के डिब्बे के बारे में सोचने लगती है।···

११

'राजा आना हमारे बँगले···' रीति बड़ी उमंगभरी लय के साथ गा रही है, 'राजा आना हमारे बंगले।'

कुछ देर तक गाने के बाद वह सहसा रुक जाती है। सोचने लगती है, राजा···आना···हमारे···बँगले···राजा आना हमारे बँगले।

'मम्मी !, 'सहसा वह पूछती है, 'बँगला क्या होता है ?'

मम्मी कुछ सिलाई-कढ़ाई में लगी हैं, जवाब नहीं देतीं।

'मम्मी बताओ' वह फिर पूछती है, बँगला क्या होता है ?'

'बंगला माने मकान।' मम्मी बताती हैं, 'बँगला मकान को कहते हैं।'

'बँगला मकान को कहते हैं ?' वह आश्चर्य से पूछती है।

'हाँ।' मम्मी जवाब देती हैं।

बँगला माने मकान। रीति सोचती है, बँगला मकान को कहते हैं। किसी के मकान को बँगला कहते हैं, मकान को बँगला कहते हैं।

'तो फिर मम्मी' वह कुछ सोच कर पूछती है। 'जिस मकान में हम रहते हैं, यह हमारा बँगला है ?'

'हाँ।' मम्मी बताती हैं।

वाह, क्या मजेदार बात है, यह मकान रीति का बँगला है। वह फिर आलाप करती है, 'राजा आना हमारे बँगले, राजा आना हमारे बँगले।'

कुछ ही देर में वह फिर चुप हो जाती है, राजा आना हमारे बँगले

···यह बँगला है···और···

'मम्मी' वह फिर पूछती है, 'यह मकान हमारा बँगला है न ?'

'हाँ !' जवाब मिलता है।

'और राजा ?' वह पूछती है, 'राजा कौन है ?'

'राजा !' मम्मी जवाब देती हैं, 'पापा।'

'पापा !' वह आश्चर्य से पूछती है।

'हाँ, पापा राजा हैं।' मम्मी बताती हैं।

वाह, पापा राजा हैं। यह रीति का मकान बँगला है, और पापा राजा हैं। वाह, वह उत्साह से गाने लगती है, 'राजा आना हमारे बँगले राजा···'

रीति दिन में खाते समय केवल दाल चावल ही खाती है। मम्मी लाख कहती हैं, लेकिन वह एक भी चपाती नहीं लेती। एक प्लेट में चावल और एक कटोरी में दाल लेकर उन्हें धीरे-धीरे मिला कर स्वाद लेकर खाती रहती है।···आज भी रीति दाल चावल खा रही है। इतवार का दिन है, सबको खाने-पीने में देर हो गई है। रीति भी देर से ही खा रही है। लेकिन खाने में बड़ा स्वाद आ रहा है, अरहर की दाल, बढ़िया चावल और टमाटर की चटनी···वाह, वाह···वह उँगली चाटती हुई खाती है।···ऐं, यह क्या ? दाल चावल में यह क्या पड़ा है। वह एक ग्रास खा कर जो हाथ थाली पर ले जाती है, तो दाल चावल के साथ वहाँ एक मुलायम सी गोली पड़ी मिलती है। ···यह क्या है। उसे बड़ी हैरत होती है···यह क्या हो सकता है ? ···वह अपनी कोमल उँगलियों से टटोलती है···यह तो कंचे की तरह है, लेकिन यह कंचा तो हो नहीं सकता, वह तो शीशे सा कड़ा होता है, यह तो कुछ और है, वह उसे टटोलती-टटोलती मुँह में रख लेती है··दाल चावल के नमकीन स्वाद के ऊपर एक मिठास बिखर जाती है ···यह तो अंगूर है···अंगूर···उसका हाथ फिर थाली में जाता है और उसकी उँगलियों में एक और अंगूर आ जाता है···वह आश्चर्य चकित हो उसे भी खा लेती है और···ऐं, यह एक और अंगूर···वह दाल चावल खा रही थी या अंगूर···अरे, यह भी अंगूर, और यह भी अंगूर··तभी उसे कुछ ध्यान आता है और वह चौंक कर पीछे देखती है, पापा खड़े हुए

उसकी थाली में एक-एक अंगूर डाल रहे थे···

'पापा, पापा।' वह हर्ष से चिल्ला उठती है और दाल चावल की थाली किनारे रख कर उनसे अंगूर का गुच्छा छीन लेती है···

'खन्-खन्-खन्-खन्-खन्···न्···न्···न्···न्' रीति खुशी में भरकर डिबिया हिलाती है और उसकी तेज खनखनाहट को सुन कर उसका मन नाच उठता है 'खन्-खन्-खन्-खन्-खन्···न्···न्···न्···न्' जब से यह पतला, बड़ा और हल्का दस पैसे का सिक्का चला है, रीति ने जोड़ना शुरू किया है। सबसे पहले दीदी ने उसे एक सिक्का दिया था। उसे बड़ा अच्छा लगा था और उसने बजाय उसका समोसा या मूँगफली लेने के उसे इस डिबिया में रख लिया था।···उसके बाद से घर में जब भी रेजगारी में दस पैसे का नया सिक्का आता है, वह रीति के कब्जे में हो जाता है।···एक से दो हुए, दो से तीन, तीन से चार, चार से पाँच··· हमेशा रीति गिनती रहती है···एक···दो, तीन, चार, पाँच, छै···कभी-कभी घर में आने वाली दीदी भी उसे और सिक्के दे जाती हैं।···वह पापा से भी समय-समय पर पूछती रहती है। जब भी कोई नया सिक्का वह डिबिया में डालती है और उसमें सिक्कों की संख्या बढ़ती है, रीति की खुशी और भी बढ़ जाती है।···वह उन्हें नये सिरे से गिनती है, टटोलती है और फिर डिबिया बंद करके खनखनाती है, 'खन्-खन्-खन् खन्-खन्···न्···न्···न्···न्···।'

'टन् ट···न्···न्···न्, टन् ट···न्···न्···न्' घंटी बजाता हुआ कोई सड़क पर आ रहा है। रीति दूर से ही उसकी आवाज़ पहचान जाती है···बुढ़िया के बाल वाला है। बोल रहा है, 'बुढ़िया के बाल ले लो, बुढ़िया के बाल ले लो।' और इसके साथ ही साथ घंटी भी बजाता जा रहा है 'टन्···टन्···न्···न्।'

'मम्मी, हम बुढ़िया के बाल लेंगे' रीति मचलती हुई कहती है, हमें बुढ़िया के बाल दिलवा दो।'

'ले लो।' मम्मी कहती हैं और दस पैसे का एक सिक्का उसके हाथ पर रख देती हैं।

'ए! इधर आओ।' रीति दरवाजे से लड़ती टकराती बाहर की तरफ भागती है, 'बुढ़िया के बाल वाले, इधर आओ।'

घंटी की टनटनाहट की आवाज़ नजदीक आती जाती है और रीति लान में फाटक के सहारे खड़ी सामने ताकती रहती है···बुढ़िया के बाल वाला घंटी बजाता हुआ पास आता जा रहा है।

'लाओ, दस पैसे के बुढ़िया के बाल दे दो।' वह दस पैसे का सिक्का सामने हवा में बढ़ा देती है।

बुढ़िया के बाल वाला उससे सिक्का ले लेता है। वह उसके हाथ में लटका हुआ पीपा देखने की कोशिश करती है। शीशे के भीतर कुछ झलक रहा है···शायद यही बुढ़िया के बाल हैं, लाल-लाल गोले···

'लो बिटिया ! वह तीन गोले निकाल कर रीति के हाथ पर रख देता है।

रीति तीनों गोले सहेज कर ले लेती है। उन्हें आँख के निकट लाकर देखती है, मुलायम-मुलायम उलझे हुए रेशे, उँगलियों से दबाने से पिचक जाते हैं। ···वह गप से एक गोला अपने मुँह में रख लेती है। मीठा-मीठा स्वाद उसकी जबान पर बस जाता है।

'रीति, क्या खा रही हो ?' कोई बच्चा उसके पास आकर लालसा भरी आवाज़ में पूछता है।

'बुढ़िया के बाल' रीति गुड्डू की आवाज़ पहचानकर जवाब देती है।

'कैसे हैं' गुड्डू अपनी जीभ चाटता हुआ पूछता है, 'मीठे हैं ?'

'हाँ, बहुत मीठे हैं।' रीति दूसरा गोला मुँह में रखते हुए कहती है, 'अपनी मम्मी से दस पैसे लेकर तुम भी खरीद लो।'

'गुड्डू मम्मी, मम्मी चिल्लाता हुआ अपने घर भागता है और फौरन ही पैसे लेकर भागता हुआ वापस आता है।

'दस पैसे के हमें भी दे दो।' रीति सुनती है, गुड्डू भी बुढ़िया के बाल के तीन गोले खरीद रहा है।

दो गोले खाने के बाद वह तीसरे को फिर से भली प्रकार से देखने समझने की कोशिश करती है। तभी मम्मी की आवाज़ आती है, 'रीति, एक गोला भइये के लिए रख दो।' और यह सुनते ही वह उसे भी गप् कर जाती है।···

अब तक गुड्डू भी गोले खरीद कर आ गया है। रीति अनुमान से

देखती है, गुड्डू उसके सामने खड़ा है और उसके हाथ में गुलाबी-गुलाबी तीन गोले रखे हैं। वह अपनी जीभ पर गोलों की मिठास याद करके एक बार अपनी हथेली और उँगलियाँ चाटती है, फिर गुड्डू की तरफ बढ़ती है।

'गुड्डू, अपने गोले ढक लो, नहीं तो कौवा ले जायेगा। 'वह लालसा भरी निगाह से गुड्डू के हाथ पर रखे गोलों को ताकती हुई उसे हिदायत देती है। वह उसकी तरफ देखता तक नहीं, और एक गोला मुँह में रख लेता है।

'लाओ' हम पकड़ लें, तुम्हारे हाथ से गोले गिर जायँगे' वह सुझाव रखती है, लेकिन वह पीछे हटता हुआ एक के बाद दूसरा करके दोनों गोले बारी-बारी से मुँह में रख लेता है और खाली हाथ उसके सामने नचाने लगता है।

१२

पापा दफ्तर गये हैं। भइया स्कूल में है। मम्मी रसोईघर में काम कर रही है। रीति कमरे में शीशे के सामने खड़ी है। बड़ा-सा आदमकद शीशा···रीति उसमें आँख सटाकर अपने आपको देखने की कोशिश करती है।···ऐसा लगता है, जैसे कोई छाया सी मँडरा रही हो। वह अपना चेहरा शीशे में ढूँढ़ने की कोशिश करती है।···कुछ है, सामने झिलमिलाता सा···यही वह है, यही रीति है···वह कल्पना में शीशा देखती है, उसका गोरा-गोरा रंग···। हाँ, रीति गोरी है। सब लोग उसे खूब गोरी कहते हैं।···शीशे में भी तो वह खूब गोरी ही दिखाई दे रही है।···देखें, हाँ वाकई में रीति का रंग खूब गोरा है।

रीति की इच्छा होती है कि वह अपने गालों पर क्रीम लगाये। शीशे वाली मेज पर तमाम शीशियाँ और डिब्बे रखे हैं। वह ढूँढती है···बहुत सारी छोटी बड़ी शीशियाँ···इनमें नाखूनों की लाली है, बिंदियाँ हैं, भौंहें बनाने वाली पेंसिलें हैं, लिपिस्टिक हैं, आलता है, वैसलीन है, क्रीम है···यह है···यही है सफेद शीशी और लाल ढक्कन···। वह धीरे से उस शीशी को उठा लेती है। आहिस्ता से उसका ढक्कन खोलती है और उसे सूँघती है। सुगंध उसकी नाक में भर जाती है लेकिन साथ-ही थोड़ी-सी क्रीम भी उसकी नाक पर लग जाती है। वह हौले से मुस्कुराती है और उँगली से उस क्रीम को पोंछ कर फिर उसे सूँघती है। एक मीठी खुशबू फिर उसकी नाक में भर जाती है। फिर वह धीरे से अपने गालों पर लगा लेती है और ठीक से मलने लगती है।

फिर शीशी में उँगली डाल कर वह थोड़ी और क्रीम अपने गालों पर लगाती है। एक चिकनाहट भरी सुगंध फिर से लहरा जाती है। रीति को संतोष होता है। एक बार फिर वह शीशे के निकट अपना मुँह लाकर देखने का प्रयत्न करती है। फिर से शीशे में उसे कुछ झलमलाता-सा लगता है। हाँ, यही रीति है, रीति का गोरा चेहरा है। सचमुच क्रीम लगाने से उसका रंग भी गोरा हो गया है।

अब उसकी उँगलियाँ कुछ टटोलती हुई सी शीशे की मेज पर दाहिनी ओर बढ़ती हैं। यह···यह···यह···हाँ यह। एक रंगीन प्लास्टिक के डिब्बे पर वे ठहर जाती हैं। छोटा, पतला-सा डिब्बा···ऊपर सुनहरे अक्षरों में कुछ लिखा है।···रीति धीरे से उस डिब्बे को उठा लेती है। अपनी आँख के निकट लाती है और पढ़ती है। हाँ, उस पर कुछ लिखा है, सुनहरा-सुनहरा-सा शायद पाउडर का नाम।···फिर वह अपनी कोमल उँगलियों से उस डिब्बे का ढक्कन ऊपर उठा देती है।···वाह···उसे पहले ही मालूम था। उसमें एक छोटा-सा गोल-गोल शीशा लगा है। वह उस शीशे में भी देखती है, अपना चेहरा टटोलती है जो कुछ धुँधला-धुँधला-सा लगता है। एक व्यथा मिश्रित संतोष से वह डिब्बे को दूर कर देती है फिर उँग़लियों से मुलायम मखमली पफ़ उठा लेती है। पफ उठाते ही खुशबूदार पाउडर की घास उसकी नाक में भर जाती है। वह पफ़ में थोड़ा-सा पाउडर भर कर उसे अपने चेहरे पर रगड़ने लगती है···मम्मी ने बताया था यह गुलाबी पाउडर है नेचुरल···उससे चेहरा सफेद खड़िया से पोता हुआ नहीं मालूम होता। वह डिब्बे वाले शीशे में ही देखती है, हाँ अब ठीक है, उसके गोरे रंग में गुलाबी रंग का पाउडर मिल गया है और उसका रंग और भी गोरा हो गया है।···

अब वह एक डिब्बे में रखी हुई तरह-तरह की लिपिस्टिक टटोलती है। गहरी लाल, हल्की लाल, गुलाबी, नेचुरल···एक लिपिस्टिक वह उठा लेती है और उसका ढक्कन खोलती है।···यह लाल है, हाँ लाल ही है। वह उसे हल्के से अपने होठों पर फिराती है। हाँ, उसके होठ भी लाल-लाल हो गए हैं। गोरे गाल, उन पर बढ़िया क्रीम, फिर पाउडर और फिर होठों पर लाल लिपिस्टिक···वाह···अभी रीति खूब अच्छा लगने लगेगी, खूब गोरी-गोरी और खूब सुन्दर···

सतर्क भाव से दायें-दायें टटोलते हुए उसके हाथ में एक छोटी-सी डिबिया आ जाती है।···यह क्या है।···हाँ, यह···वह उसे आँख से सटाकर देखती है। फ़ीरोजी रंग का ढक्कन···यह डिबिया···हाँ, यह डिबिया बिन्दी की डिबिया है, बिन्दी की डिबिया···यह दीदी ने मम्मी को दी थी।···यह वही डिबिया है न ?···वह आहिस्ता से उसके ढक्कन को उलट देती है।···हाँ, यह बिन्दी की ही डिबिया है। इसके ढक्कन के भीतरी भाग में एक छोटा गोल शीशा लगा है और डिबिया में रंग-बिरंगी न जाने कितने रंग की बिंदियों के खाने हैं, हरी, लाल, नीली, पीली, रूपहली, सुनहरी, सफेद, हर रंग की बिन्दी का एक खाना, हर खाने में अलग-अलग रंगों की बिंदियाँ।···रीति का गोरा चेहरा है और लाल होठ···उसके माथे पर लाल ही रंग की बिन्दी खूब फबेगी।··· वह मेज पर से टटोलकर शीशे की एक पतली सलाई उठा लेती है। इसी से मम्मी बिन्दी लगाती हैं।···बिन्दी की डिबिया में से वह लाल रंग वाला खाना ढूँढ़ती है···यह···हाँ, शायद यही लाल रंग का खाना है और यही लाल रंग की बिन्दी···धीरे-धीरे उस सलाई की चौड़ी नोक पर वह बिन्दी भर लेती है और अपने माथे पर उसे लगाती है, पहले थोड़ी-सी हल्की, धुँधली, फिर उसी पर और गहरी लाल, वाह, अब रीति अच्छी लगती है, गोरे गाल, लाल होठ और माथे पर लाल बिन्दी··· वह खुशी में भर कर गुनगुनाने लगती है, 'बिन्दिया चमकेगी···'

इसी गुनगुनाहट में उसके हाथ में एक मुन्नी-सी डिब्बी आ जाती है। ···हाँ, बिलकुल छोटी-सी, एकदम मुन्नी-सी डिब्बी···छोटी-सी, पतली-सी, वह उसका ढक्कन खोलती है···हाँ·· यह काजल है, काजल, वह अपनी उँगली की पोर में थोड़ा-सा काजल लेती है, फिर धीरे-से अपनी आँखों में लगाती है···पहले एक आँख में, सावधानी से, फिर दूसरी आँख में। एक हल्की-सी मिरचाहट-सी लगती है, दो तीन बार पलकें खोल बंद कर वह अंदाज लगाती है, काजल ठीक लग गया है···लेकिन डिब्बी बंद करने के पहले वह उसी उँगली पर काजल की छोटी बिन्दी लेकर अपने माथे पर दाहिनी ओर लगा लेती है।···रीति बड़ी सुन्दर है न ! और आज तो और भी सुन्दर लग रही है, गोरे गालों पर क्रीम और पाउडर, लाल लिपिस्टिक, लाल बिन्दी, आँखों में काजल।···मम्मी भी उसके

माथे के कोने पर डिठौना लगा देती हैं···रीति को भी लगाना चाहिए— हाँ, यह छोटी-सी काली बिन्दी··· 'तेरी प्यारी-प्यारी सूरत को, किसी की नज़र न लगे···।'

काजल की डिब्बी शीशे वाली मेज पर रखते-रखते रीति का हाथ एक पतली-सी पेन्सिल से टकरा जाता है। ···एक छोट-सी पेन्सिल और उसके एक सिरे पर कैप लगी हुई। ···हाँ, यह एक पेन्सिल है, पेन्सिल। लेकिन वह पेन्सिल नहीं, जिससे कापी पर लिखते हैं, बल्कि भौंहें काली बनाने वाली पेन्सिल है ···रीति जानती है···वह आहिस्ता से उसकी कैप निकाल लेती है और अंदाज से उसे अपनी भौंहों पर फिराती है। दायीं भौंह पर, फिर बायीं भौंह पर। गहरी काली हो गयी हैं अब उसकी दोनों भौंहें। ···वाह, कितनी बढ़िया महीन, काली, गहरी और नुकीली भौंहें, जैसे पापा की कोई बहन जी लगाकर आती हैं। ···हाँ, वैसी ही···। अब रीति का मेक अप पूरा हुआ है। ···गोरे गालों पर हल्की क्रीम, फिर गुलाबी गालों पर गुलाबी पाउडर, लाल होठों पर लाल लिपिस्टिक, माथे पर गोल लाल बिन्दी, आँखों में काजल, माथे पर कोने में डिठौना, और भौंहें बढ़िया, महीन, काली, गहरी और नुकीली···।

अब···रीति सन्तोष से अपना चेहरा शीशे में निहारती है···और तभी एक धमाके की आवाज़ के साथ टाल्कम पाउडर का बड़ा डिब्बा नीचे गिर जाता है···वह सहम जाती है, क्या हुआ? क्या गिर गया? क्या टूट गया? ···क्या, क्या···क्या?

'क्या हुआ?' मम्मी रसोईघर में से दौड़ी हुई आती हैं, 'क्या गिर गया? क्या टूट गया?'

रीति मेज से अलग हटकर पहले तो अपराधी भाव से खड़ी हो जाती है, फिर सहमी हुई हँसी हँसकर कहती है, 'मम्मी, हमारा मुँह देखो।'

'हाय, मरी!' मम्मी उसका चेहरा देखकर चीख पड़ती है, यह सब क्या लाल काला पोत लिया मरी ने, चुड़ैलों जैसा चेहरा बना लिया।'

और तभी मम्मी उसे चूमकर जोर से हँसने लगती हैं।···रीति हक्की-बक्की रह जाती है।

रीति अपने फाटक के खंभे को पकड़े उदास खड़ी है। कालोनी के बच्चे स्कूल जा चुके हैं। सामने कुछ काला-काला-सा रेंगता मालूम पड़ता है। वह सहसा चौकन्नी हो जाती है। ऐं, यह क्या है? क्या यह लूसी है।···लूसी···हाँ, सामने वाले मकान में रहने वालों की कुतिया का बच्चा है, लूसी।

'लूसी!' वह अपने अनुमान को विश्वास में बदलने के लिए धीरे से पुकारती है लूसी।'

वह काला धब्बा उसके निकट आता है। उसका आकार भी धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगता है।···हाँ, यह लूसी ही है। उसे यकीन हो जाता है। यह लूसी ही है, जो उसके निकट आकर दुम हिला रही है। लूसी···

'आ जा' वह लूसी को गोद में उठा कर खिलाने लगती है, 'आ—आ···आ···आ।'

एकदम से रीति के हृदय में लूसी के लिए ढेर सारा प्यार उमड़ पड़ता है। वह उसे कलेजे से चिपका कर उसका मुँह चूम लेती है। लूसी अपने लंबे-लंबे कान फड़फड़ाती है। रीति को अच्छा लगता है। वह फिर पूछती है, 'क्या बात है लूसी?···भूख लगी है?···क्या आज तुम्हें खाने को नहीं मिला?···चलो, तुम्हें डबल रोटी खिलाएँगे।'

कँधे पर से फिसलती लूसी को एक बार फिर से सम्हाल कर रीति धीरे-धीरे घर में आ जाती है। चुपचाप रसोईघर में जाकर डबल रोटी के डिब्बे में से एक टुकड़ा निकाल कर बरामदे में सोफे पर बैठ जाती है। लूसी को अपनी गोद में बैठा लेती है। लूसी उसके हाथ में पकड़े हुए रोटी के टुकड़े को एक ही बार में मुँह मार कर हबक लेना चाहती है। रीति हौले से एक तमाचा लूसी के रसीद करती है, 'हट, मरी! यह क्या करती है। अभी बैठ जा, हम खिलाएँगे।'

लूसी सीधी बैठकर भूखी आँखों से डबल रोटी के टुकड़े को ताकने लगती है। रीति एक-एक ग्रास तोड़-तोड़ कर उसकी ओर बढ़ाती जाती है। लूसी हबक-हबक कर खाती जाती है। रीति बीच-बीच में उसके लंबे-लंबे कानों को भी टटोलती रहती है। कभी-कभी प्यार में भर कर उसे चुमकारती भी रहती है, 'लूसी, क्या आज तुम्हें खाना नहीं मिला?

भूखी हो ? लो, और खा लो ।'

सारा टुकड़ा खाने के बाद रीति के सम्हालते-सम्हालते लूसी उसकी गोद से उतर कर बाहर की तरफ भाग जाती है। रीति भी उसकी ग्राहट का पीछा करते-करते उसके पीछे चल पड़ती है।

'रीति, रीति' टप्पू बाहर से दौड़ता हुम्रा ग्राता है ग्रौर जोर-जोर से पुकारता है, 'रीति, रीति।'

'क्या है ?' रीति चौंक कर पूछती है, 'क्या है टप्पू ?'

'रीति।' टप्पू हाँफता हुआ उसे बताता है, 'सैंडी मर गई।'

'ऐं' रीति का कलेजा धक् से हो जाता है। वह फिर से सुनना चाहती है, 'क्या हुम्रा ?'

'सैंडी मर गई। 'टप्पू फिर से दोहराता है सैंडी मर गई।'

'सैंडी मर गई।' रीति स्तब्ध होकर पूछती है, 'कैसे मर गई ? कैसे मर गई सैंडी ?'

'बीमार हो गई थी। ग्रस्पताल में मर गई।' टप्पू हड़बड़ाहट में बताता है ग्रौर फिर बाहर भाग जाता है, ग्रन्य बच्चों को सूचना देने के लिए।

रीति बुदबुदाने लगती है, 'सैंडी मर गई, हाँ, मर गई, सैंडी मर गई सैंडी, सैंडी, काली कुतिया, सैंडी, काली-काली कुतिया मर गई··· मर गई, सैंडी मर गई।'

रीति उद्विग्न हो जाती है। जब सैंडी मर गई है तो लूसी का क्या होगा ? लूसी, हाँ, बेचारी, लूसी, झबरी कुतिया, लंबे-लंबे कानों वाली लूसी वह खूब रोती होगी···ग्रब उसे कौन दूध पिलायेगा, किसके पास वह सोयेगी, खाना कैसे खायेगी बाहर पार्क में खेलेगी कैसे ?··· वह तो खूब रो रही होगी।

रीति का कलेजा द्रवित हो ग्राता है। वह धीरे से उठ कर चौके में ग्रा जाती है। डबल रोटी के डिब्बे को टटोल कर खोलती है। उसमें हाथ डालने पर एक भी टुकड़ा नज़र नहीं ग्राता। शायद रोटी खत्म हो गई है। फिर क्या किया जाये ? क्या उसे बिस्कुट दिया जाये, या परांठा, या बासी रोटी ?···बेचारी भूखी होगी, रो रही होगी।

रीति चुपचाप बाहर ग्रा जाती है। जोर-जोर से ग्रावाज़ लगाती है,

'लूसी, लू···ऊ···ऊ···सी···ई···ई।'

एक काला-काला धब्बा दौड़ता हुआ आता है। रीति के पैरों के पास आकर दुम हिलाने लगता है।

'लूसी, लूसी' रीति पुकारती है और धीरे से उसे गोद में उठा लेती है। आहिस्ता-आहिस्ता उसका सिर सहलाती हुई वह उसे पुचकारती रहती है उसका कान टटोलती है और उसे फिर पुचकारती है। लूसी की दुम उसी तरह से हिलती रहती है।

'लूसी !' बहुत ही प्यार से हुई भरी आवाज़ में रीति कहती है, क्या बात है, बेटी ! तुम रो रही हो ? एं, रोती क्यों हो बेटी ? क्या तुम्हारी मम्मी मर गई हैं ? इसलिए। नहीं, नहीं, लूसी रोओ मत।'

लूसी के बजाय रीति खुद रोने लगती है। उसकी आवाज़ भारी हो जाती है। वह फिर एक बार जोर से लूसी को भींच लेती है, 'तुम्हारी मम्मी मर गई हैं न। हैं लूसी। क्या तुम्हें रात को अकेले डर लगता है। आज तुम्हें किसी ने दूध नहीं दिलाया। किसी ने खाना भी नहीं दिया ? चलो हम तुम्हें खिलाते हैं।'

लूसी को सहलाती हुई रीति घर के भीतर आ जाती है। रसोईघर की ओर बढ़ते-बढ़ते उसकी फीकी आँखों से टप्प से एक आँसू गिर पड़ता है।

'मे···आँ···आँ···आँ···ओं···ओं···ओं' आधी रात के गहरे सन्नाटे में एक बड़ी भयानक आवाज़ आसमान में गूंज रही है, 'मे···आँ···आँ···ओं···ओं···ओं।'

रीति की नींद सहसा टूट जाती है और नींद टूटते ही वह सहम जाती है। गहरा अँधियारा, सन्नाटा और उसे बेधती हुई भयानक आवाज़, 'मे···आँ···आँ···ओं···ओं···ओं।'

रीति का कलेजा धक् से हो जाता है। यह तो बिल्ली की आवाज़ है। कहाँ से बोल रही है बिल्ली। क्या ऊपर छत पर है ? या पड़ोस के मकान में ? या सड़क पर ? या बाहर बरामदे में ? और या··· या···या···?

रीति सहम जाती है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि रीति के कमरे की खिड़की पर बैठी हुई हो बिल्ली ?···बाप रे···उसे फौरन स्वीटी का

ध्यान आता है। बिल्ली ने स्वीटी को सूँघ लिया होगा। और तभी उसे खाने के लिए वह वहाँ पर आई होगी। हाय, स्वीटी का क्या होगा? स्वीटी···बेचारी पिंजड़े में ही है न? रात में कहीं बाहर खुली तो नहीं रह गई? तब तो बिल्ली उसकी गर्दन पकड़ कर दबोच लेगी।···अरे, यह फिर बोली, 'मे···आँ···आँ···ओं···ओं···ओं।'

गहरे सन्नाटे को बेधती हुई यह आवाज़ जैसे सारे आसमान में गूँजती रहती है। रीति को ऐसा लगता है अब जैसे बिल्ली स्वीटी की गर्दन दबोचने नहीं, बल्कि रीति का ही गला दबाने के लिए आई है। हाय राम, उसकी साँस डर के मारे जैसे रुकने सी लगती है। रीति का गला दबाने रात के वक्त बिल्ली आई है। अपने दोनों पंजों से वह रीति का गला दबा लेगी और···।

'पापा।' रीति भय में डूबी हुई आवाज़ में पुकार उठती है, 'पापा।'

'क्या है?' बगल के पलँग पर सोये हुए पापा चौंक कर पूछते हैं और तभी वह सुनते हैं, में···आँ···आँ···ओं···ओं···ओं···।'

रीति कुछ नहीं बोलती। पापा फिर पूछते हैं, 'क्या डर लग रहा है, रीति?'

'हाँ' बड़ी मुश्किल से रीति की आवाज़ निकलती है, 'बिल्ली बोल रही है।'

डरो मत पापा उठकर बत्ती जला देते हैं।

रीति का भय कुछ कम होता है। फिर भी वह अपनी आशंका व्यक्त करती है, 'बिल्ली स्वीटी को खा जायेगी।'

'नहीं बेटा' पापा समझाते हैं, 'स्वीटी पिंजड़े में बंद है।'

'बिल्ली हमारी गर्दन दबा देगी?' वह दूसरा भय व्यक्त करती है।

नहीं, बेटा' पापा फिर कहते हैं, 'बिल्ली यहाँ नहीं है, तुम चुपचाप सो जाओ।'

पापा बत्ती बुझा कर फिर लेट जाते हैं। लेकिन रीति तरह-तरह की आशंकाओं में डूबी न जाने कहाँ-कहाँ की बातों में खोई सहमी रहती है।

दोपहर से ही सामने वाले मकान के दरवाजे पर भारी भीड़ जमा है।

'रीति टप्पू आकर उसे सूचना देता है, 'वह जो सामने वाले मकान में दीपक रहता था न, वह मर गया।'

'ऐं!' रीति चौंकती है, दीपक मर गया।'

'हाँ टप्पू बताता है, दीपक मर गया।'

कैसे?' रीति पूछती है।

'उसने जहर खा लिया था।' टप्पू बताता है, 'बाहर खूब सारी पुलिस जमा है।

टप्पू फिर बाहर भाग जाता है। रीति सहमी हुई सी बाहर लान वाले फाटक पर आती है। चुपचाप बहुत से लोग इधर से उधर आते-जाते दिखाई देते हैं। एक तरह की सनसनी-सी फैली मालूम होती है। फुसुफुसा-फुसफुसा कर लोग बातें कर रहे हैं।

'कल रात को उसने नींद की गोलियाँ खा लीं।' एक आवाज़ कहती है।

'बात क्या थी?' दूसरी आवाज़ पूछती है।

'वह सनियर कॆंब्रिज में फेल हो गया था।' एक अन्य आवाज़ बोलती है।

'नहीं, नहीं' कोई आवाज़ प्रतिवाद करती है। 'वह तो दूसरा लड़का है, जो सीनियर कॆंब्रिज में है। यह वह नहीं था।'

'फिर वह कौन था? पिछली वाली आवाज़ पूछती है।

'यह तो वह लड़का था, जो इस सामने वाले ब्लाक में रहता था, जिसके माँ-बाप आज कल यहाँ नहीं थे।' एक आवाज़ जवाब देती है।

'लेकिन यह सब हुआ कैसे?' कोई पूछता है।

'हुआ ऐसे', कोई बताता है, 'कि कल रात को दस बजे तक यह लड़का अपने दोस्तों के साथ घूमता गप करता रहा। उसके बाद घर में आकर सो गया। सवेरे जब महरी ने दरवाजा खटखटाया, तो इसने खोला नहीं। उसके बाद धोबिन के खटखटाने पर भी नहीं खोला। तीसरे पहर जब इसके चचेरे भाई और उनके आवाज़ें देने पर भी इसने नहीं नहीं खोला, तब लोगों को शक हुआ। उन्होंने दरवाजा तोड़ा तो देखा कि वह अपने बिस्तर पर बाकायदा मरा हुआ पड़ा है। तभी पुलिस को बुलाया गया।'

'लेकिन उसने जहर खाया क्यों ?' कोई पूछता है।

'जहर नहीं खाया है भाई' कोई जवाब देता है, 'असल में वह नशे की और नींद की गोलियाँ खूब खाया करता था। कल भी शायद उसने खाई हों और उसका दिल पहले से ही बहुत कमजोर था। हो सकता है कि वही नुकसान कर गई हों। ···अब असलियत तो पोस्टमार्टम की रिपोर्ट के बाद मालूम पड़ेगी।'

'···रीति' टप्पू आकर रीति को दहलाता हुआ बतलाता है, 'दीपक का पेट फाड़ा जायेगा।'

'पेट फाड़ा जायेगा ?' रीति चौंककर पूछती है, 'क्यों ?'

'पुलिस वाले दीपक की लाश अपने साथ मोटर पर रख कर ले गये हैं 'टप्पू बताता है, 'वे लोग उसकी लाश का पेट चीरेंगे।'

इससे पहले रीति कुछ और पूछे, टप्पू भागता हुआ भीड़ में जा कर मिल जाता है। रीति गुमसुम खड़ी-खड़ी सोचती रह जाती है।···पुलिस वाले दीपक की लाश को मोटर पर रख कर ले गये हैं। मरे हुए दीपक को ले गये हैं। उसका पेट चाकू से फाड़ेंगे, खून-खून निकलेगा···रीति चुपचाप मम्मी के पास लौट आती है।

'आँटी, आँटी !' टप्पू दौड़ता हुआ आता है और रीति से पूछता रीति, आंटी कहाँ हैं ?'

'चाय बना रही हैं' रीति बताती है।

टप्पू दौड़ता हुआ रसोई में चला जाता है। रीति भी उसके पीछे-पीछे चली जाती है।

'आँटी', टप्पू हाँफता हुआ कहता है, 'दीपक की लाश पुलिस वाले वापस लाये हैं।'

'कब ? मम्मी पूछती हैं।

'अभी-अभी लाये हैं' टप्पू बताता है, 'उसने जहर नहीं खाया था, उसका नींद में ही हार्ट फेल हो गया था।

'उसका पेट फाड़ा गया था ?' रीति पूछती है।

'हाँ' टप्पू बताता है, अब उसकी लाश जलाने के लिए ले जायेंगे। ···खूब सारे लोग बाहर जमा हो रहे हैं।'

यह कहता हुआ टप्पू फिर बाहर भाग जाता है। रीति भी बाहर

आ कर बढ़ती जाती भीड़ को अनुभव करती है।…वह मन ही मन बुद-बुदाती जाती है…दीपक मर गया।…मरे हुए दीपक को पुलिस ले गई थी।…पुलिस ने उसका पेट फाड़ कर देखा था।…अब पुलिस वाले उसकी लाश को वापस दे गए हैं।…अब सब लोग उसे ले जाकर लकड़ी के ढेर पर रख कर गोमती के किनारे जला देंगे।…उसकी मम्मी खूब रोएँगी।…

१३

रीति हाथ मुँह धो कर नाश्ता कर चुकी है। आँगन और बरामदे में धूप भर गई है। पापा अभी तक अखबार पढ़ रहे हैं। मम्मी रसोई में है।

स्वीटी को सर्दी लग रही होगी। रीति सोचती है और स्वीटी के पिंजड़े के पास जाकर खड़ी हो जाती है। पहले वह उसके भीतर झाँक कर देखने की कोशिश करती है। उस में कुछ सफेद-सफेद रेंगता मालूम होता है। यही स्वीटी है, स्वीटी। वह सींखचों के भीतर से उँगली कोंचती है। वह कूँ-कूँ की आवाज़ निकालता है, जो रीति को बड़ी प्यारी लगती है। उसकी आवाज़ से ही प्रोत्साहित हो कर वह पिंजड़े की खिड़की को ऊपर उठाती है और उसके भीतर हाथ डाल देती है। कूँ-कूँ करती हुई स्वीटी छोटे से पिंजड़े में इधर-उधर भागने लगती है। रीति को बड़ा अच्छा लगता है। वह उसे कस कर पकड़ लेती है और पिंजड़े के बाहर खींच लेती है। स्वीटी की कूँ कूँ की आवाज़ और तेज होती जाती है। रीति उसे कंधे पर ले कर पुचकारने लगती है···आ···आ···आ···आ··· भूखी हो स्वीटी, चलो तुम्हें घास खिलाएँ।

तभी बाहर का दरवाजा खड़कता है और महरी आती है।

'रीति!' उसे देख कर महरी बताती है, 'कल रात को स्वीटी की माँ मर गई।'

'ऐं' रीति चौंककर पूछती है, 'क्या ?'

'स्वीटी की अम्माँ कल रात को मर गई' महरी समझाती हुई बताती है।

'कैसे ?' रीति पूछती है।

'ठंडक लग गई थी' महरी बताती है, 'सरदी से मर गई।'

'तो चाय पिला देती' रीति कहती है, 'ऊनी स्वेटर पहना देती।'

महरी चुपचाप हँसती हुई अंदर रसोई में काम करने चली जाती है। रीति उदास हो जाती है और खूब कस कर कूँ-कूँ करती स्वीटी को अपनी गोद में चिपका लेती है। उसे चुप कराती हुई कहती है, 'स्वीटी, रो रही हो ? रो मत ! तुम्हारी मम्मी मर गई है, इसलिए रो रही हो ? उन्हें सरदी लग गई थी, बेटा ! इसीलिए मर गई। रात को हम तुम्हें भी सूटर पहना देंगे और कम्बल ओढ़ा देंगे। अच्छा, रो मत। अभी हम तुम्हें चाय पिलाएँगे। पहले चल कर घास खा लो।'

'मम्मी ! कौन आया है ?' किसी के आने की आहट पाकर रीति पूछती है।

'बुआ आई है' मम्मी बताती है, 'तुम्हारी बुआ जी।'

बुआ ! रीति एकदम से चौंक जाती है। बुआ आई हैं, आज इतने दिनों के बाद। वही बुआ, जिन्होंने रीति का खूब दुलार प्यार किया था। जो उसे नहलाती धुलाती थीं। उसकी फीकी आँखों में काजल लगाती थीं, जो उसके गोरे गालों में काजल लगाती थीं, जो उसके काले बालों में रिबन बाँधती थीं···बुआ, वही बुआ।

'बुआ।' एक विचित्र सी शंका से भरी भावना के साथ वह पुकारती है।

'हाँ, रीति' 'बुआ उसके सिर पर हाथ फेरती हुई कहती हैं, 'हमें पहचानती हो ?'

'हाँ' वह कहती है। अनेक पुलकन भरी स्मृतियाँ उसके मस्तिष्क में कौंध जाती हैं। उसका संकोच एकदम से दूर होने लगता है। वह उनके निकट बनी रहती है। परन्तु तभी अचानक वह चौंक पड़ती है।···यह कौन है ?···वह अपनी क्षीण दृष्टि रेखा को स्थिर करने का प्रयत्न करती है, काला-काला, मटमैला, धुंधला-धुंधला सा एक लघु आकार···लुढ़कता हुआ, बुआ के पीछे छाया की भाँति लगा हुआ। यह कौन है ? वह सहसा संकुचित होकर सामने से हटने लगती है और अनायास ही पूछ लेती है, 'यह कौन है ?'

'यह कौन है ?' बुआ हँसते हुए दोहराती हैं, 'तुम बताओ रीति, यह कौन है ?'

तो फिर रीति का अनुमान सही ही था। यह कोई न कोई है। कौन है ? कौन हो सकता है ? बुआ का बच्चा ? लड़का ? या लड़की ? या और कोई ? है न कोई ?

'बताओ रीति' बुआ फिर से रीति के सिर पर हाथ फिराती हैं और पूछती हैं, ,बताओ, यह कौन है ?'

'हमें नहीं मालूम !' रीति लजीले स्वर में कहती है और सहसा एक भयंकर ग्लानि की भावना उसे आक्रांत कर लेती है। कसी विवशता है ? ये ऐसी पहेलियाँ हैं जिनका उस के पास कोई हल नहीं है। वह परेशान हो उठती है। उसे ऐसा अनुभव होता है, जैसे यह बच्चा भी उसे कौतूहल से देखने लगा हो और शायद उसने जिंदगी में पहली बार एक अंधी लड़की को देखा हो, अंधी लड़की को, रीति को···रीति···एक अंधी लड़की।···रीति अपमान और ग्लानि से अपने आप में ही सिमटने लगती है। वहाँ से एकाएक कहीं गायब हो जाना चाहती है। कहीं भी इस लघु आकार के दृष्टि पथ से अलग। उसे लगता है, जैसे बच्चे की जिज्ञासु दृष्टि उसे बरछे की तरह छेद रही है।

'बताओ रीति, यह कौन है ?' बुआ फिर से पूछती हैं और फिर स्वयं ही उत्तर देती है, 'यह डौली है, डौली।'

'डौली' रीति सोचती है, अच्छा नाम है, डौली। वह उसकी ओर फिर निहारती है, एक छोटा-सा लुढ़कता-पुढ़कता आकार, जिसका नाम डौली है, डौली।

'डौली ?' रीति चौंक कर पूछती है।

'हाँ, डौली।' बुआ बताती हैं और डौली का हाथ पकड़ कर आगे खींचती हैं। वह आगे खिची चली आती है।

'देखो डौली', बुआ उससे कहती है, 'देखो यह रीति है, इसके साथ खेलो।'

रीति के मन में सहसा स्नेह उमड़ आता है। उसकी सारी ममता जाग्रत हो उठती है। वह जैसे सहमी हुई सी आगे बढ़ती है और अपना हाथ आगे बढ़ा देती है। उसका कलेजा धक्-धक् करने लगता है। पता

नहीं डौली उससे बोलेगी या नहीं।

'जाम्रो डौली', तभी मम्मी कहती हैं, 'जाम्रो रीति के साथ खेलो।'

रीति धड़कते कलेजे से प्रतीक्षा करती रहती है। तभी बुम्रा डौली का हाथ उठा कर रीति के हाथ में पकड़ा देती हैं। रीति उसका कोमल स्पर्श अनुभव करती है और उसकी हथेली को जकड़ लेती है। उसे एक जिम्मेदारी का अनुभव होने लगता है। वह काँपती हुई आवाज़ में पुकारती है, डौली।'

'हाँ।' डौली की मीठी आवाज़ उसके कानों में पड़ती है और वह प्रसन्नता में भर जाती है।

'आओ तुम्हें घुमाएँ।' रीति कहती है और उसका हाथ पकड़ कर बाहर ले आती है।

'देखो, यह सीढ़ी बनी है न, इसके ऊपर दो मकान बने हैं। एक में सरला दीदी रहती थीं। पहले मेरी मम्मी के साथ खूब दोस्ती थी। हम से भी खूब बोलती थीं। हम लोग साथ-साथ घूमने जाते थे। पिक्चर भी जाते थे। 'पाकीजा' हमने उन्हीं के साथ देखी थी। उनके बाल बड़े लम्बे-लम्बे थे। गाना भी बड़ा अच्छा गाती थीं। कभी-कभी शलवार कुर्ता भी पहनती थीं। अब उनकी शादी हो गई है, वह चली गई हैं। ···एक बार बीच में आई थीं अपने दुल्हे के साथ···उनके एक लड़की भी हुई और मर भी गई। ···अब फिर आएँगी थोड़े दिनों के बाद। आज कल खाली उनके पापा जी रहते हैं अकेले इस मकान में।' रीति एक ही साँस में जैसे डौली को सब कुछ बता डालना चाहती है। वह टुकुर-टुकुर ताकती हुई चुपचाप सुनती रहती है।

'आओ चलो तुम्हें दिखाएँ ऊपर।' रीति का उत्साह बढ़ता है और वह डौली का हाथ पकड़ कर ऊपर चढ़ती है। आधी सीढ़ियाँ तय करने के बाद रुक जाती है और दीवार में बनी जाली से सड़क पर झाँकने लगती है।

'डौली देखो, यह जाली है न' रीति सहसा अपनी आवाज़ में एक सहमापन-सा अनुभव करने लगती है, 'इस में से झाँक कर हम लोग बाहर देख सकते है। ···तुम्हें मालूम है, वो गुड्डी रहती है बगल वाले मकान में? उनके वहाँ एक बहुत बढ़िया अल्सेशियन कुत्ता था। उसे गुड्डी के

पापा जंजीर में बाँध कर यहीं जालियों के पास बैठा देते थे। वह एक जाली में से सिर निकाल कर दिन-भर भौं-भौं भौंका करता था।··· बड़ी तेज भौंकता था। जहाँ भी कोई नया आदमी देखा या गाय, भैंस, बकरी, गधा, टट्टू देखा, बस भौंकना शुरू कर दिया।···हाय डौली··· एक बार क्या हुआ कि गुड्डी के पापा उसे ऊपर छत पर खुला छोड़ कर चले गये।···उसने ऊपर से देखा, कोई बन्दर के नाच वाला डमरू बजाता हुआ आया। बस वह भौंकता-भौंकता ऊपर छत पर से नीचे सड़क पर कूद पड़ा।···हाय, उस बेचारे के दोनों हाथ टूट गये। फिर उसे अस्पताल ले जाया गया और उसके दोनों हाथों पर पलस्तर चढ़ाया गया, लेकिन वह बाद में मर गया।'

यह कहती-कहती रीति अचानक रुक जाती है। उसे ऐसा आभासित होता है, जैसे नीचे सड़क पर कुछ रेंग रहा है। वह डौली से पूछती है, 'देखो, डौली वह क्या है, नीचे सड़क पर ? क्या कोई जानवर है ?'

'हाँ' डौली जाली में से बाहर झाँक कर बताती है, 'एक गइया है।'

'हाय, गइया!' रीति सहसा चौंक कर कहती है, 'चलो, नीचे चलें, कहीं हमारे लॉन में घुस कर सब न खा जाये।'

बहुत सम्हाल-सम्हाल कर कदम रखती हुई रीति डौली को नीचे लाती है। फिर बाहर लॉन की ओर मुड़ जाती है। छोटे से स्प्रिंगदार दरवाजे को ठेल कर भीतर चली जाती है और अनुमान से बाहर की तरफ ईंटा फेंक कर मारने का अभिनय करती हुई 'हट्-हट्' करने लगती है।

'देखो, गाय चली गई ?' कुछ देर तक हाँक लगाने के बाद रीति पूछती है।

'हाँ,' डौली जवाब देती है।

'अच्छा' रीति संतोष से कहती है, 'अब आओ, तुम्हें हम अपना लान दिखायें। यह देखो, गुलाब के फूल कितने बड़े-बड़े लगे हैं। हमारे यहाँ एक दीदी आती हैं न ? उन्हीं का भाई दे गया है। खूब रंग-बिरंगे गुलाब निकलते हैं, लाल, पीले, सफेद।···और यह देखो, यह छुई मुई का पेड़ है। अगर इसकी एक पत्ती को भी तुम उँगली छुआ दो तो सारा पेड़ मुरझा जाता है।···देखो···देखो जी तुम छूकर ?···लाओ, अपना हाथ लाओ।'

वह अंदाज़ से डौली का हाथ पकड़ कर उस पौधे से लगाती है। सचमुच वह मुरझा जाता है। बाद में डौली अपने आप दूसरे पौधों को छूती है। वे भी मुरझा जाते हैं। वह आश्चर्य में डूबी रह जाती है।

'देखा' रीति पूछती है।

'हाँ' डौली उत्तर देती है।

'आओ, इधर आओ' रीति उसका हाथ पकड़ कर उसे दूसरी ओर खींच ले जाती है, यह देखो, अमरूद का पेड़ है। इसमें खूब अमरूद निकलते हैं। देखो, कहीं तुम्हें अमरूद लगे हुए दिखायी दे रहे हैं ?'

'हाँ' डौली उत्साह से उत्तर देती है।

'नीचे लगे हैं कि ऊपर ?' रीति पूछती है।

'ऊपर भी हैं, नीचे भी।' डौली पेड़ की ओर निहारती हुई उत्तर देती है।

'अच्छा, तो चुपके से दो अमरूद तोड़ लो।' रीति कुछ धीमे स्वर में कहती है, 'जरा देखकर तोड़ना, कच्चे न हों।'

यह कहती हुई वह डौली का हाथ छोड़ देती है। वह थोड़ी उचक फाँद करने के बाद एक नीचे झुकी हुई शाख को और नीचे झुकाकर उसमें से एक-एक कर के दो अमरूद तोड़ लेती है। एक खुद खाने लगती है और दूसरा रीति को खाने को दे देती है।

'मीठा है ?' रीति अपना अमरूद कुतरती हुई पूछती है।

'हाँ !' उत्तर मिलता है।

'मेरा भी मीठा है।' रीति बताती है, 'हमारे यहाँ खूब सारे अमरूद निकलते हैं। जब हम लोग नहीं खा पाते हैं, तो दूसरे लोगों के यहाँ भिजवा देते हैं। ···जिन दीदी का भाई हमारे यहाँ गुलाब का पौधा लाया था, उन्होंने भी अपने घर से एक बार ढ़ेर से अमरूद भिजवाये थे। खूब बड़े-बड़े थे और खूब मीठे।'

'एक अमरूद और तोड़ लें छोटा-सा ?' डौली अपने हाथ में बचे अमरूद के टुकड़े को एक दम से मुँह में रख कर पूछती है।

'हाँ, हाँ' रीति भी अपने हाथ का बचा हुआ टुकड़ा मुँह में रखकर जवाब देती है, 'एक अपने लिए और तोड़ लो, एक मेरे लिए।'

यह कहती हुई रीति उत्सुकतापूर्वक ताकने लगती है। डौली इधर-

उधर टटोल कर फिर एक शाख को उछल कर पकड़ लेती है। इस बार वह खुद दो बड़े-बड़े अमरूद तोड़ लेती है और एक छोटा-सा अमरूद रीति को पकड़ा देती है।

'यह देखो,' रीति अमरूद खाती हुई दूसरी तरफ पड़ी हुई जमीन की तरफ इशारा करके कहती है, 'यह जमीन भी हमारी है। इसमें माली ने तरकारी बोई है। कभी आलू, कभी टमाटर, कभी भिंडी, कभी मूली, कभी बैंगन, कभी तुरई, कभी कुछ···एक बार खूब बड़ा-सा कद्दू निकला था और हाँ एक बार खूब सारे भुट्टे निकले थे···हम लोगों ने भून-भूनकर खाए थे···।'

'रीति, अन्दर आओ, चाय पीने' तभी मम्मी की आवाज़ आती है, 'डौली को भी लेती आओ।'

'चलो डौली अन्दर चलें, चाय पीने' वह डौली का हाथ पकड़ने की चेष्टा करती है, 'मम्मी बुला रही हैं।'

डौली चलते-चलते आधा खाया अमरूद फेंक कर एक और अमरूद झटके से तोड़ लेती है और फिर खुद ही रीति के हाथ में अपना हाथ पकड़ा कर चल पड़ती है।

'घुमा लाई उसे ?' मम्मी पूछती हैं।

'हाँ' रीति जवाब देती है और चाय की मेज पर मिठाई की प्लेट को टटोलती हुई बैठ जाती है।

आज घर में काम करने वाली आया, अपनी भतीजी को लाई है। रीति देखती है, एक छोटी-सी, साँवली-सी लड़की, लाल फ्राक पहने हुए, हरा पैजामा, रंगीन मोजे और कपड़े के जूते, सिर पर कत्थई मखमल का कनटोपा बाँधे हुए। पैरों में चाँदी के घुँघरू वाली पायल भी पड़ी हुई है। जब वह ठुमक-ठुमक कर चलती है, तो 'छुनक-छुनक' आवाज होती है। ···रीति उसे गौर से देखती है।

'यह कौन है मुन्नी ?' रीति आया से पूछती है।

'यह हमारी बहन की लड़की है ?' वह बताती है।

'बहन की लड़की ?' रीति चौंक कर पूछती है।

'हाँ।' जवाब मिलता है।

'किसकी ?' रीति कुछ सोच कर पूछती है, 'चुन्नी की ?'

'हाँ।' जवाब मिलता है।

रीति कुछ क्षणों के लिए विचारमग्न हो जाती है।...पहले उसके घर में आया का काम करने चुन्नी आती थी। बहुत दिनों हुए चुन्नी का व्याह हो गया है और अब मुन्नी आकर काम किया करेगी।... बस तभी से मुन्नी काम करने आती है।...और आज वही मुन्नी-चुन्नी की लड़की को लाई है।

'इसका क्या नाम है ?' कुछ सोच कर फिर रीति पूछती है।

'इसका नाम रीति है' मुन्नी जवाब देती है।

'रीति ?' रीति चौंक कर पूछती है, 'क्या ?'

'हाँ' मुन्नी हँसती हुई बताती है, 'इसका नाम भी रीति ही है।'

रीति कुछ सोच में पड़ जाती है। उसका नाम रीति है और इसका नाम भी रीति है। दोनों का नाम रीति है। यह कैसे हो सकता है कि दो लड़कियों का एक ही नाम हो ? जो उसका नाम है, वही इसका भी नाम हो ? ...आखिर कार वह कुछ सोच विचार के बाद कहती है, 'नहीं मुन्नी, तुम चुन्नी से जा कर कहो इसका कुछ और नाम रखे।'

'क्यों ?' मुन्नी हँसती हुई पूछती है।

'क्यों ?' रीति कहती है, 'क्योंकि रीति तो हमारा नाम है ? जो हमारा नाम है वह इसका नाम कैसे हो सकता है ? एक ही नाम दो लड़कियाँ कैसे रख सकती हैं ?'

मुन्नी हँसती रहती है। रीति पुन: जोर दे कर कहती है, 'नहीं, नहीं, तुम चुन्नी से कहकर इसका दूसरा नाम रखो।'

'अच्छा, अच्छा' मुन्नी हँसती हुई कहती है, 'हम कह देंगे चुन्नी से और इसका नाम भी दूसरा रख देंगे...लेकिन तुम इसे कोई चीज खेलने को तो दे दो।'

'क्या चीज ?' रीति पूछती है और रंग-बिरंगे कपड़ों में चुपचाप एक आकार की भाँति स्थिर उस लड़की को देखती है।

'इसे अपनी कोई पुरानी गुड़िया दे दो' मुन्नी कहती है।

'अच्छा' रीति कुछ सोच में पड़ जाती है। कौन-सी गुड़िया दे वह

इसे ? लम्बी चोटी वाली, या जूड़े वाली ? वह जो नाचती है, या वह जो अपने आप बोतल से पानी उलट कर पीती है ? या वह वाली जिसकी चाभी खराब हो गयी है ? या वह जो आँखें मटकाती है···या ···या···या···।

'अच्छा आओ,' रीति उसे अपने पास बुलाती हुई अपनी गुड़ियों की अलमारी की तरफ बढ़ जाती है, 'आओ, तुम्हें गुड़िया दें ।'

१४

...उस शाम सरदी कुछ ज्यादा बढ़ जाती है। रेडियो पर बहुत धीमी आवाज में हल्की स्वर लहरियाँ बज रही हैं। रीति सोफे पर ओढे लपेटे बैठी है। पापा अभी थोड़ी देर पहले ही घर लौटे हैं। बिना सूट बदले ही वह अपनी मेज पर बैठ गये हैं और दिन में आई हुई डाक देख रहे हैं। रीति शीतल कौतूहल से उनकी हरकतें देख रही है। हो सकता है कोई बढ़िया तस्वीरों वाली रंगीन पत्रिका आई हो, तो पापा अभी उसे देंगे।... वह देखती जा रही है, पापा एक के बाद एक चिट्ठी पढ़-पढ़ कर अलग रखते जा रहे हैं। वह सूनी आँखों से उनके गिरते उठते हाथ देख रही है। कभी-कभी यह आशा होती है कि शायद उसकी किस्मत का फैसला कर देने वाली कोई बात कही जायेगी। ...या यह भी हो सकता है कि नानी की कोई चिट्ठी आई हो, या मौसी की...या...।

'रीति' सहसा पापा एक चिट्ठी पढ़ कर पुकारते हैं।

वह साँस रोक कर शून्य में निहारने लगती है और उनकी तरफ कान लगा देती है।

'रीति!' पापा एक सफेद कागज पर लिखी हुई चिट्ठी उसकी आँखों के निकट फड़फड़ा कर हिलाते हुए बताते हैं 'देखो, बेटा! यह चिट्ठी अमरीका से आयी है।'

बिना कुछ सोचे समझे ही उसकी आँखों में एक चमकीली-सी लहर काँप जाती है।

'कहाँ से?' अमरीका से? 'रीति हाथ बढ़ाते हुए कहती है, लाओ

देखें।'

पापा रीति के हाथ में वह चिट्ठी पकड़ा देते हैं। सफेद-सफेद कुर-कुरा कागज, तीन परतों में मोड़ा गया, उस पर काली-काली धुँधली-सी फैली हुई सतरें।

'यह चिट्ठी अमरीका से आयी है, पापा ?' रीति पूर्ण आश्वस्त होने के लिए पूछती है।

'हाँ, बेटा !' पापा गम्भीर आवाज़ में बताते हैं। जब भी उनकी आवाज़ ऐसी ठंडी होती है, रीति का कलेजा भय से काँपने लगता है।

'इस चिट्ठी में क्या लिखा है ?' रीति पापा से पूछती है।

'इस चिट्ठी में…' पापा उसे गोद में बैठा कर कहते हैं, 'इस चिट्ठी में लिखा है कि आँख का एक डाक्टर अमरीका से यहाँ आ रहा है, वह रीति की आँखें ठीक कर देगा।'

रीति की पुतलियाँ फैल जाती हैं। वह साँस रोके सुनती रहती है।

'डाक्टर ने लिखा है कि हम अमरीका से आ रहे हैं। आप पटना आ जाइये। वहाँ के अस्पताल में हम ठहरेंगे। आप रीति को लेकर वहाँ आ जाइए, हम रीति की आँखें ठीक कर देंगे।'

'पटना में ?' रीति पूछती है, 'नानी के यहाँ ?'

'हाँ, हम लोग सब पटना चलेंगे। वहाँ पर नानी के यहाँ ठहरेंगे। फिर अस्पताल चल कर डाक्टर को दिखा देंगे। वह तुम्हारी आँखें ठीक कर देगा। उसने बहुत से आदमियों की आँखें ठीक की हैं।'

पापा धीरे-धीरे उसका सिर सहलाते हुए उसे बहुत सी बातें बताते जा रहे हैं और रीति चुपचाप सुनती चली जा रही है।

…कुछ समय पहले तक ऐसा लगता था, जैसे उसकी दुनिया सारी ज़िंदगी के लिए अँधेरी रह जाने वाली थी। लेकिन अब यह एक नयी प्रकाश किरण झाँकी है।…अमरीका का डाक्टर अब यहाँ आ गया है। वह पापा के साथ पटना जायेगी। वहाँ नानी के घर ठहरेगी। डाक्टर के पास अस्पताल जायेगी। वह या तो उसकी आँख आपरेशन से ठीक कर देगा और या उसकी पुतली निकाल कर दूसरी पुतली बदल देगा। अपने साथ वह बहुत सी पुतलियाँ लाया है।…बायीं आँख चाहे बिल्कुल ठीक न हो, लेकिन दाहिनी आँख तो जरूर ही ठीक हो जायेगी। कुछ दिन

तक अस्पताल में रहने के बाद वह फिर घर लौट आयेगी। तब उसकी आँखें दूसरे लोगों जैसी ही हो जायेंगी। तब वह अपनी ब्रेल की किताबों को उठाकर फेंक देगी।

···उसे ब्रेल की आलपीन की मूंठ की तरह से उठी हुई बिंदियों से नफरत होने लगती है। वह फिर रंगीन तस्वीरों वाली किताबें खरीदेगी, जिन में लाल पीले रंग का आम और हरे नीले रंग का शरीफा बना होगा, जिनमें पतंग और ऊन का गोला बना होगा, जिन में खरगोश और बंदर बने होंगे। फिर वह स्कूल जायेगी, अपने वाले अँधों के स्कूल नहीं: जहाँ अँधेरी सीढ़ियाँ और दम घोंटने वाले कमरे हैं, बल्कि खुले और बड़े मैदानों वाले स्कूल में, जहाँ खेल के लिए झूले और फिसलने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं।

···और तब वह अपनी इन गोल ढीले घेरे वाली फ्राकों को भी पहनना छोड़ देगी। फिर वह बढ़िया ड्रेस पहनेगी, स्कूल की यूनिफार्म, स्कर्ट और ब्लाउजनुमा शर्ट, कमर में बेल्ट, गले में टाई, टाई पर बिल्ला, बढ़िया जूता और मोजा। फिर अंधों के स्कूल की तरह संगीत क्लास में दरी पर बैठने के लिए जूता खोलने और किसी के द्वारा चुरा लिए जाने का भ्रम नहीं रहेगा। फिर वह अपने बढ़िया किरमिच के बस्ते में खाने का डिब्बा रखेगी, तब खाना किसी के द्वारा खाये जाने का भय नहीं रहेगा। खाना खा कर फिर उछल कूद होगी, जैसे और लड़कियाँ करती हैं···लक्ष्मी, डौली, प्रेमा, गुड्डी और अनीता वगैरह। और तब ये लड़कियाँ उसे बातों-बातों में झूठ बहका कर खिझायेगी नहीं।

लेकिन···आपरेशन ? फिर आपरेशन···।

'पापा···' उसे याद आता है, पिछले आपरेशन के वक्त वह बिलख-बिलख कर रह गयी थी, वह सहमी हुई आवाज में कहती है, हम आपरेशन नहीं करायेंगे।'

'बेटा घबराओ नहीं ! यह तकलीफ तुम्हें बरदाश्त करनी होगी। और एक बार इसे सह कर जब तुम्हारी आँखें ठीक हो जायेंगी, तब तुम सारी जिंदगी की तकलीफ से बच जाओगी।'

'लेकिन···पापा···।'

'क्या बेटा ?'

'हमें डर लगता है ?'

'किससे ?'

'डाक्टर से, आपरेशन से, अस्पताल से।'

'नहीं, बेटा ! डरा मत करो। तुम्हें डरना नहीं चाहिए।'

रीति कुछ सोचने लगती है। उसके मन में अब एक बड़ी प्रबल इच्छा हो रही है जो कुछ भी अब तक उसके लिए कल्पित था, उसे पूर्णतः यथार्थ मान लेने की, उसे यथार्थ रूप में परिणत होते देखने की। और यह सब तभी हो सकेगा, जब उसकी आँखें ठीक हो जायँगी। तब वह दूसरे बच्चों की तरह किलकारी मारते और ताली पीटते हुए सिनेमा देख सकेगी। आजकल की तरह नहीं, जब वह अँधेरे हॉल में बैठी रह कर सूने धुँधले परदे पर अट्टाहास करती आकृतियों को चलते-फिरते देखती है, बल्कि उन सभी दूसरे लोगों की तरह, जो उन आकृतियों से वैसे नहीं सहमते, जैसे वह भीत होती है, क्योंकि दृष्टि के माध्यम से उनके बीच की दूरी कम हो जाती है।

और यही नहीं आँखें ठीक हो जाने पर वह रसोई घर में अपनी मम्मी के कामों में भी सहायता कर दिया करेगी। वह आटा गूँथेगी, आलू काटेगी, रोटी बनायेगी, दाल पकायेगी, केतली में चाय का पानी भर कर हीटर पर रखेगी, सिल बट्टे पर चटनी पीसेगी, इमामजिस्ते में मसाला कूटेगी, टोस्टर पर डबल रोटी के टुकड़े सेंकेगी।

...लेकिन यह सब तब होगा, जब उसकी आँख का आपरेशन हो, वह अस्पताल में रहे।

'पापा...?'

'हाँ, क्या बात है, बेटा ?'

'पापा, हम पटना में अस्पताल में नहीं रहेंगे।'

'नहीं बेटा ! ...अस्पताल में तो तुम्हें रहना ही पड़ेगा। ...लेकिन वहाँ तुम अकेली थोड़ी ही रहोगी। वहाँ तुम्हारे साथ हम रहेंगे, मम्मी रहेंगी। और वह वैसा अस्पताल नहीं होगा, जैसा यहाँ है। ...वहाँ पर बहुत बढ़िया एक कमरा होगा। उसमें तुम्हारा पलँग होगा। उसी में हम लोग भी बराबर तुम्हारे पास ही रहेंगे। हम भी रहेंगे, मम्मी भी

रहेंगी। नानी भी रोज तुम्हें देखने आयेंगी। भइया भी आयेगा।'

भयानक जाड़े में पापा पटना जाने की सारी तैयारी करने चलते हैं।

'यह देखो, पटना के अस्पताल से चिट्ठी आई है। डॉक्टर दो जनवरी को आयेगा और ग्यारह बजे सवेरे तुम्हें देखेगा। हम लोग यहाँ से पहली तारीख की शाम को सात बजे चल देंगे और दो तारीख को सवेरे छः बजे पटना पहुँच जायेंगे।···पहले नानी के यहाँ चलेंगे। वहाँ रुक कर फिर अस्पताल जायेंगे। ग्यारह बजे डाक्टर से बात होगी···और फिर···'

···सारा काम पापा पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार ही कर रहे हैं। पटना पहुँच कर सब लोग हाथ मुँह धो कर चाय नाश्ता करने लगते हैं। इसी बीच पापा जल्दी से जा कर एक मोटर का इंतजाम कर लाते हैं।

'अस्पताल यहाँ से बहुत दूर है। बिना मोटर के बड़ी परेशानी होती।' पापा कहते हैं।

लेकिन मोटर पर भी कम परेशानी नहीं होती। करीब एक घंटे तक इधर-उधर भटकने के बाद तक कहीं अस्पताल पहुँचते हैं। बाहर मोटर रुकवा कर पापा अस्पताल के भीतर जाते हैं और सुपरिण्टेण्डेण्ट को अपने साथ लेकर आते हैं। उसे भी मोटर में बैठाकर पूरे अस्पताल का चक्कर काटते हुए वह दूसरी ओर पहुँचते हैं। वहाँ पर कार्ड बनाया जाता है।

'मरीज का नाम ?' कोई पूछता है।

'रीति।' पापा जवाब देते हैं।

'आप लोग इधर से चले आइये।···यहाँ इस कमरे में बैठिए···अभी दस ही मिनट में आपको डॉक्टर बुलायेगा।' एक निर्देश मिलता है।

दस-पन्द्रह मिनट पहाड़ की तरह गुजरते हैं। रीति के लिए जैसे जिंदगी और मौत का फैसला होने वाला है। अमरीका वाला डाक्टर जैसे उसके लिए आँखें ही लेकर आया है। फुसफुसाहट भरी आवाज में

कोई न कोई बात छेड़ कर सभी लोग अपना ध्यान उधर से हटाये रहते हैं।

'मिस रीति ?' सहसा आवाज़ आती है।

'हाँ...'पापा जल्दी से उठते हैं और रीति का हाथ पकड़ लेते हैं।

'इधर से आइये मरीज को लेकर।' निर्देश मिलता है।

'हाँ...आइए...अन्दर आ जाइए...'कोई कहता है।

'गुड मार्निंग डाक्टर...पापा कहते हैं।

'गुड मार्निंग...इधर आओ, बेबी, इधर आओ, हाँ...'शायद डाक्टर ही कहता है।

रीति को लेकर आगे बढ़ जाते हैं पापा। डाक्टर टार्च से रीति की आँखों में झाँकता है।

'यह कब से है ?' कुछ देर के परीक्षण के बाद डाक्टर पूछता है।

'यह बाई बर्थ है।' पापा बताते हैं।

'अच्छा, बड़ा कंप्लीकेटेड केस है। डाक्टर कुछ गंभीर आवाज़ में कहता है।

'...जी...।' पापा कुछ मायूसी भरी आवाज़ में कहते हैं।

'क्या ट्रीटमेंट कराया, आपने ?' डॉक्टर पूछता है।

'दो आपरेशन सीतापुर आई हास्पिटल में कराये थे...'पापा बताते हैं।

'उस वक्त इसकी क्या उम्र थी ?' डाक्टर पूछता है।

'एक साल...'पापा जवाब देते हैं।

'इससे पहले ?' डाक्टर फिर पूछता है।

'उससे पहले कंसल्टेशंस और डायोगनोसिस चलती रही।' पापा बताते हैं।

'आपरेशन के बाद ?' डाक्टर फिर पूछता है।

'फिर तीन-तीन महीने के गैप से तीन आपरेशन लखनऊ के मेडिकल कालेज में कराये गये। 'पापा बताते हैं।

'कोई इंप्रूवमेंट ?' डॉक्टर फिर पूछता है।

'कोई खास नहीं...इन सब आपरेशनों का रिजल्ट यह हुआ कि बायीं आँख की तो रही सही रोशनी जाती रही और दायीं आँख में बहुत

स्लाइट वजन बढ़ा। पापा बताते हैं।

'अच्छा···इधर देखो बेबी···'डाक्टर रीति से कहता है।

डाक्टर महीन बत्तियों से कुछ देर तक रीति की दोनों आँखों का परीक्षण करता रहता है। इस बीच सभी की आँखें उसके चेहरे पर लगी रहती हैं। फिर वह कुछ हताश के भाव से कुरसी पर पीछे टिक जाता

'क्यों ?···' पापा उत्सुकता से पूछते हैं।

'बात यह है···कि···इसका केस अंडरटेक करना मेरे लिए मुश्किल होगा···' डॉक्टर थकी हुई आवाज़ में कहता है।

'जी···' पापा बोलते हैं।

'जी हाँ। इसकी बायीं आँख तो आलमोस्ट डेड है···और दाहिनी आँख में भी कोई ज्यादा पासिबिलिटीज़ नहीं है।' डॉक्टर फिर कहता है।

'लेकिन आप शायद अमेरिका के किसी आई बैंक से कुछ कार्निया लाये हैं···' पापा पूछते हैं।

'हाँ, पर···' डॉक्टर को कुछ संकोच होता है।

'अगर उसमें कुछ पैसे का खर्च हो तो मैं आठ-दस हजार रुपये···' पापा कहते हैं।

'जी नहीं, ऐसी बात नहीं है, असल में···'डाक्टर बीच में ही बोलता है।

'और अगर आप समझते हों कि कोई कार्निया आपके लिए स्पेयर करना पासिबिल नहीं होगा, तो आप मेरी दोनों आँखें टेस्ट कर लीजिए। मेरी जिस आँख का वजन ज्यादा स्ट्रांग हो और जो आँख ज्यादा हेल्दी हो, उसे निकाल कर आप इस बच्ची···' पापा जल्दी-जल्दी कहते हैं।

'देखिए, मैं आपके सेंटीमेंट्स समझता हूँ। लेकिन दरअसल बात यह है कि यह केस कारनियल ट्रांसप्लांटेशन का नहीं है···जहाँ तक मैं इस केस को एक्ज़ामिन कर पाया हूँ, इस बेबी का रेटिना डिफेक्टिव है। बायीं आँख का रेंटिना तो लाइट तक में जरा भी रियेक्ट नहीं करता, और दाहिनी आँख का भी आलमोस्ट होपलेस है।···' डाक्टर समझाने का प्रयत्न करता है।

'तो फिरआप इसके लिए किस तरह का ट्रीटमेंट सजेस्ट करते हैं ?' पापा पूछते हैं।

'मेरी राय में फिलहाल आप किसी भी तरह का मेडिकल या सर्जिकल ट्रीटमेंट मत कराइये···क्योंकि उसे फायदा होने के बजाय नुकसान होने का ज्यादा डर है।' डाक्टर बताता है।

'क्या आपका ख्याल है कि अब उसकी आँखों में कोई होप नहीं है ?' पापा जैसे धड़कते हुए कलेजे से पूछते हैं।

'नहीं। ऐसी बात नहींहै। दर असल इस वक्त तक आई सरजरी जितनी डेवलप हुई है, उसमें इस केस के लिए कोई गुंजाइश नहीं है···लेकिन आप देखते हैं आज कल ओवर नाइट ग्रेट एचीवमेंट्स की खबरें हम सुनते हैं।···हो सकता है कि नियर फ्यूचर में कुछ ऐसा हो कि हम इसके लिए कुछ कर सकें···' डाक्टर कहता है।

'आपको कुछ होप है ?' पापा पूछते हैं।

'जी हाँ।' डाक्टर पक्की आवाज़ में कहता है।

'और आपका निश्चित विचार है कि इस वक्त इसमें कुछ नहीं हो सकता ?' पापा फिर पूछते हैं।

'जी हाँ, मुझे दुख है···लेकिन मैं मजबूर हूँ।' डाक्टर कहता है।

आगे की बातें साधारण और औपचारिकता भरी होती हैं। घर लौटने पर पापा नानी के कहने से भी एक दिन के लिए भी नहीं रुकते। सीधे स्टेशन जाकर सीटें बुक कराते हैं और उसी रात को लखनऊ वापस लौट आते हैं।

···अगले दिन तमाम लोग उनसे रीति की आँखों के बारे में पूछने आते हैं और थोड़ी-थोड़ी देर रुक कर चले जाते हैं। अन्ततः पापा कमरे में चुपचाप बैठे रह जाते हैं। दूसरी औरतों के साथ मम्मी भी वहाँ से जा चुकती हैं। एक अशुभ नीरवता वहाँ फैली रह जाती है और वातावरण को स्तब्ध बनाती रहती है। रीति ऐसे में डरी रहती है और उसकी धड़कन कलेजे में तेज होती जाती है।

···'बेटा।' वह प्रत्याशित रूप से चौंक उठती है। उसके दोनों कान जैसे करेंट-सा लगने से चौकन्ने हो जाते हैं। पल भर के लिए उसकी साँस जैसे रुक सी जाती है। वह अपना फैसला, भाग्य के निर्णय सुनने

के लिए अचल हा जाती है, जैसे अर्द्धचेतन की सी स्थिति में आ जाती है।

'सुनो बेटा!' पापा की हथेली उसके सिर को आश्वस्तती हुई सहलाती रहती है। उसकी आवाज़ रुंध जाती है और गला भारी हो आता है। रीति चौकन्नी हो जाती है और उसे लक्षण अच्छे नहीं मालूम होते हैं।

'सुनो बेटा।' पापा ठंडी आवाज़ में उस से कहते हैं, 'अभी तुम्हारी आँखें ठीक नहीं होंगी।'

वह कुछ नहीं बोलती। अब उसे जैसे कुछ भी सुनने को बाकी नहीं रह जाता। ऐसा लगता है, जैसे कहीं पर कोई बड़ा बम सा फ़टा हो और सब कुछ ध्वस्त हो गया हो। उसकी फीकी आँखें शून्य के सूनेपन में जाकर अटक जाती हैं। बहुत धीरे-धीरे उनमें आँसुओं के बिन्दु उभरने लगते हैं और वे डबडबा जाती हैं।

'लेकिन बेटा।' पापा उसे उठा कर अपनी गोद में बैठा लेते हैं और कहते हैं 'अभी चाहे तुम्हारी आँखें ठीक न हों, लेकिन हम लोग बरावर कोशिश करते रहेंगे। उस डाक्टर ने जरूर मनाही कर दी है, लेकिन हम लोग दूसरे डाक्टरों से बात करेंगे।'

रीति सिसकती हुई सी उनकी गोद में सिमट जाती है। आशा का इतना बड़ा सूत्र टूटने के बाद वह इस अंधकार भरे जीवन क्षेत्र में कूदने से काँपने लगती है।

'हम लोग बराबर कोशिश करते रहेंगे, सुना बेटा।' पापा उसका माथा चूम कर उस का सिर अपनी छाती में दबाते हुए कहते हैं 'मैं जो कुछ कर सकता हूँ, करूँगा। फिर से तमाम लोगों को चिट्ठियाँ लिखूँगा। उनसे डाक्टरों के पते पूछूँगा। डाक्टरों से राय लूँगा। उनसे तुम्हारी आँखों का इलाज कराऊँगा।'

रीति को अब कुछ भी विश्वाश करने योग्य नहीं लगता।...उसके जीवन की यह दारुणता शायद कभी भी इस जीवन में खत्म नहीं होगी।

'लेकिन तुम्हें घबड़ाने की जरूरत नहीं है।' पापा कहते रहते हैं, 'हम चाहें और कुछ न कर पायें, लेकिन हम तुम्हारी आँखें ठीक कराने के लिए सब कुछ करेंगे, हमेशा करते रहेंगे, जब तक कि इनमें रोशनी न आ जाये।'

रीति को लगता है, जैसे कहीं पर रोशनी की एक किरण झलक कर बुझ गई हो, जैसे हमेशा के लिए निराशा बनाये रखने का सामान हो गया हो।

'तुम्हारी आँख जरूर ठीक होगी। अगर आज नहीं तो न सही, लेकिन एक दिन, कभी न कभी जरूर, हाँ, जरूर ठीक होगी।' पापा फिर कहते हैं।

लेकिन रीति जैसे अब कुछ नहीं सुनती। वह न जाने एकाएक ही वहाँ की थकावट का अनुभव करने लगती है। एक तरह की शून्यता उसे डसती जाती है। उसके आँसू अब उसकी आँखों से बह कर नीचे आ जाते हैं। उस की पलकें भीग चुकी होती हैं और आँसुओं की कुछ बूँदें गाल पर गिर कर सूख गयी होती हैं। कुछ आँसू ओठों पर आ कर उस का स्वाद कड़वा बनाने लगते हैं।

'अब हम एक दूसरे डॉक्टर को पत्र लिखेंगे। शायद वह कुछ कर सकेगा।' आगे पापा कहते हैं।

हाँ! रीति को लगता है, शायद। शायद यह, शायद वह, शायद कोई और···और शायद···! वह भयानक रूप से निपट अकेलापन महसूस करती है।···दरअसल उसने इस डाक्टर पर बहुत भरोसा कर रखा था।

उसे याद आता है कुछ और भी लोग इस दैवी यंत्रणा का शिकार थे। उसके बारे में सब लाग कहते हैं कि अगर वह जन्माँध न होती, तो शायद उसकी आँखें ठीक हो जातीं···लेकिन लाजो···उसका रूप और फीकी बड़ी आँखें उसकी कल्पना में घूम जाती हैं। पंजाबी परिवार की वह लड़की तो जन्मांध नहीं थी? सात साल की उम्र, स्वस्थ शरीर··· उस दिन जब स्कूल की बस चारबाग रिफ्यूजी मारकेट के पास घूम रही थी तो हार्न की आवाज़ होते ही लाजो की माँ उसकी उँगली पकड़े हुए फुटपाथ पर आ कर खड़ी हो गई थी।

'देखिए कितनी प्यारी लड़की है, कितनी बड़ी-बड़ी आँखें हैं, लेकिन भगवान् की इच्छा।' एक स्वर गूँजा था।

'हाँ, साहब और क्या? देखिए, देखने में मालूम ही नहीं होता है कि इसकी आंखों में रोशनी नहीं है।' दूसरी आवाज़ आई थी।

'पुतलियाँ तो वैसी ही बड़ी, काली और आम लोगों की तरह हैं।' तीसरी आवाज़ बोली थी।

'क्यों, माँ जी ! इस बच्ची की आँखें कैसे जाती रहीं ?' चौथी आवाज़ ने प्रश्न किया था।

'अरे क्या बतायें भइया। अच्छी भली आँखें थीं अच्छी भली लड़की थी, स्कूल जाती थी, पढ़ती थी, डेढ़ साल पहले देवी महारानी की कृपा हुई, उसी में आँखें जाती रहीं।' लाजो की माँ ने बताया था।

'अच्छा, क्या चेचक में आँखें चली गईं ?' फिर प्रश्न हुआ था।

'हाँ, भइया।' फिर माँ ने रोते हुए जवाब दिया था।

···और रीति को याद आता है कि लाजो तो जन्मांध नहीं है। फिर उसकी आँखें क्यों नहीं ठीक कर दी जातीं। उसकी पुतलियाँ क्यों नहीं बदल दी जातीं ?

···शायद···हाँ, बस, शायद···और भी···हाँ, उसे कुछ और याद आता है···उस दिन की बात याद आती है, जब कालोनी में नई पड़ोसिन श्रीमती गर्ग आई थी। पहली बार उन्होंने रीति को देखा था।

'हाय, हाय देखो तो कितनी प्यारी बच्ची है। क्यों बहन जी ! इसकी आँखें···' उन्होंने कहा था।

'हाँ, जन्म से खराब हैं।' मम्मी ने उन्हें बताया था।

'ओ, हो···हाय, कैसी सुन्दर लड़की और···क्यों बहन जी ! आप ने इसका इलाज नहीं करवाया कहीं ?' उन्होंने पूछा था।

'अरे बहुतेरा इलाज करवाया, जहाँ तक हो सकता था, कोशिश की···' मम्मी ने बताया था।

'कोई फायदा नहीं हुआ ?' उन्होंने पूछा था।

'कहाँ हुआ ? देख ही रही हैं। मम्मी ने बताया था।

आपरेशन भी कराया था ?' उन्होंने फिर पूछा था।

'एक आपरेशन ! अरे सात, सात आपरेशन हो चुके हैं।' मम्मी ने जवाब दिया था।

'ओ हो···लेकिन बहन जी ! हमने तो सुना है कि आजकल खराब आँख निकाल कर अच्छी आँख भी लगा देते हैं।' उन्होंने कहा था।

'हाँ सब किस्मत की बात है।' मम्मी ने बताया था।

'और क्या बहन जी!' उन्होंने कहा था, 'वरना बताओ, बेचारी इतनी तकलीफ क्यों उठाती...और फिर यही क्यों? आप लोगों की तकलीफ भी तो कम नहीं होगी। बहन जी आपको क्या बताऊँ। मेरी बड़ी दीदी इलाहाबाद में रहती हैं...उन बेचारी को शादी के बाद पहले तो पाँच साल तक कोई बच्चा ही नहीं हुआ। डॉक्टरों को दिखाया, पूजा पाठ करवाया, दान पुण्य किया, मगर नतीजा नहीं। आखिरकार जब उम्मीद छोड़ चली तो फिर एक लड़की हुई।...अब भगवान् की माया देखो यह कि संतान भी उसे दी तो ऐसी कि वह जन्म से अंधी, लंज, बहरी, गूँगी और सारा शरीर जैसे लकवा मारा हुआ था। हालत यह थी कि बस जिंदा मांस का एक लोथड़ा-सा था। पैदा होते ही भाग दौड़, दवाई इलाज शुरु हुआ। दर्जनों हकीमों, वैद्यों, डाक्ठरों को दिखाया गया। हजारों रुपया फुंक गया। लेकिन रत्ती भर फायदा नहीं हुआ।...अब वह लड़की छै-सात साल की हो चुकी है। अब ऐसा है कि जिस दिन से पैदा हुई है, उस दिन से बराबर लेटी ही रहती है। न उठ सकती है, न बैठ सकती है, न कुछ देख सकती है, न बोल सकती है, न सुन सकती है, सिर्फ उसी तरह बिस्तर पर पड़े-पड़े बढ़ती चली जाती है...पहले बहन सोचती थी कि ईश्वर कोई सन्तान दे दे, चाहे जैसी हो, लेकिन अब सोचती है कि ऐसी सन्तान से तो निःसन्तान रहना अच्छा था। बहन जी, अब आप ही सोचिए अब तक तो खैर किसी तरह हो रहा है, लेकिन आगे...क्या आगे भी इसी तरह से यह अंधी, बहरी, गूँगी, लुंज लड़की इसी तरह जिंदगी गुजार देगी...राम...राम...मेरे तो उसके बारे में सोचते-सुनते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं...।'

...और रीति यह सब याद करती हुई सोचने लगती है कि दुनिया में अथाह पीड़ा और दुःख है। उसके लिए दोष चाहे किसी को दिया जाय, पर इससे दुःख या पीड़ा कम नहीं होती। रीति का स्वयं भी कोई इलाज कम नहीं हुआ, लेकिन यह दुःख उसके अपने भोगने के लिए है, और उसे भोगना होगा। भले ही कुछ हो, उसका यही प्रारब्ध है।

...दुःख की यही तीखी अनुभूति रीति के कलेजे में जैसे बहुत गहराई तक एक घाव बन कर समा जाती है। एक रंगीन शीशे के खिलौने की

तरह उसके सारे सपने टूट कर चकनाचूर हो जाते हैं। झन् की आवाज़ के साथ उसके तमाम टुकड़े इधर-उधर बिखर जाते हैं।···और असहाय रीति की अंधी आँखों का तमाशा देखने के लिए एक बड़ा मजमा जमा होता है।···रीति अपनी सूनी निगाह ऊपर उठाती है, सामने, आगे-पीछे, अगल-बगल···ये सब क्या हैं ? कौन लोगे हैं ? कैसे तमाशबीन हैं ?··· धब्बे जैसे···मटमैले धब्बे···उस पर हँसते हुए से···

और तब रीति के मन में एक विचित्र प्रकार का आत्मविश्वाश-सा जाग्रत होता लगता है।···वह इन लोगों को अपनी असहायावस्था पर हँसने नहीं देगी। उसके सामने कुछ धब्बे एक चक्र में नाचने लगते हैं···लाजो, राधा, शिवराम,, हरखू, दया परसाद,छोटी, मैकू, गुल्लन, रामनिवास, श्यामा और मोहन···ये सभी मटमैले धब्बों की तरह रीति की फीकी आँखों के सामने चकरघिन्नी की तरह नाचते हैं···ये सब···और हाँ···और भी हैं, न जाने कितने···सब के सब एक चुनौती का सामना करने के लिए कमर कसे हैं।···रीति भी उन्हीं अभागों में है, जिसको दुनिया की सबसे बड़ी नियामत यानी आँखें नहीं मिली हैं···तो फिर वह भी सबके जैसी एक धब्बा ही है।···वह स्वयं अपने स्वरूप की कल्पना करती है। उसे लगता है कि वह इस दुनिया में तमाशाइयों के मजमें की चुनौती स्वीकार करेगी। वह अंधी रहेगी, लेकिन अपाहिज नहीं रहेगी। ···और इस निश्चय के साथ वह फिर एक बार अपनी आँखों पर जोर देकर सामने देखने की कोशिश करती है, लोगों को पहचानना चाहती है···परन्तु उसकी विवशता फिर उसकी सीमा बन जाती है। उसे कुछ नहीं दिखाई देता।···बस कुछ धब्बे जैसे ही चक्राकार नाचने लगते, हैं, धब्बे, मटमैले धब्बे···और वह उन्हीं में उलझ कर रह जाती है।

◇ ◇ ◇